सूर-साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन

लेखक
डॉ॰ प्रेमनारायण टंडन, पी-एच॰ डी॰,
हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

२३ जून, १९५८

प्रकाशक : हिंदी साहित्य-भंडार,
गंगाप्रसाद रोड, लखनऊ
मुद्रक : विद्यामंदिर प्रेस,
रानीकटरा, लखनऊ
प्रथम संस्करण : २३ जून, १९५८
मूल्य : पाँच रुपए

'सरिता' को

युग-युग से जो 'सागर' के अभाग्य-रूपी खारेपन को

दूर करने के असफल प्रयत्न करके भी

अभी निराश नहीं है

निवेदन

प्रस्तुत पुस्तक में 'सूर-काव्य' के आधार पर सूरदास और उनके समकालीन समाज की सांस्कृतिक विचारधारा का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न किया गया है। विषय का और भी विशद तथा सोदाहरण विवेचन करने का यद्यपि लेखक के पास अवकाश था, तथापि अनुसंधान-संबंधी कुछ कारणों से तद्विषयक लोभ का उसे संवरण करना पड़ा है। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि अब तक प्रकाशित सूर-साहित्य-संबंधी किसी भी ग्रंथ में प्रस्तुत विषय का इस प्रकार परिचय नहीं मिलता। मुझे विश्वास है कि कृष्ण भक्ति-साहित्य, विशेष सूर-साहित्य, के अध्येता निश्चय ही इस कार्य को आगे बढ़ाने की आवश्यकता पर विचार करेंगे।

समर्पण की 'सरिता' के समान ही युग-युग से संस्कृति की पावन धारा भी समाज-'सागर' के जीवन को सभी प्रकार से सुखी बनाने का अनवरत प्रयत्न करती आ रही है; फिर भी इसके अभाग्य का 'खारापन' दूर नहीं हुआ है और आज भी समाज अनेक प्रकार से पीड़ित है। प्रस्तुत पुस्तक कुछ क्षण के लिए ही यदि किसी भी पाठक का चित्त हलका कर सकी तो मैं अपना श्रम सार्थक समझूँगा।

—प्रे० ना० टंडन

❀ विषय-सूची ❀

१. वातावरण-परिचय

सूर और समकालीन समाज—

कवि या लेखक समाज से कितना ही उदासीन क्यों न हो, अपने युग की संस्कृति और सामाजिक विचारधारा के संबंध में कुछ न कुछ संकेत वह अपनी रचनाओं में कर ही देता है। यह ठीक है कि काव्य में ऐसा सामयिक चित्रण सांगोपांग नहीं हो सकता और गीतकाव्य में तो इसके लिए और भी कम अवकाश रहता है, परंतु धर्म-प्राण देश की जनता के अत्यंत प्रिय आराध्य की लोक-लीला को कवि सूर ने जब अपनी रचना का विषय बनाया, तब अपने समय की सांस्कृतिक स्थिति का परिचय कराने का अवसर उसको स्वभावत: मिल गया। विभिन्न वर्गों के आचार-विचार, नियम - सिद्धांत, निष्ठा-विश्वास, धर्म और कला-सम्बन्धी उनकी मान्यताएँ, समाज में प्रचलित रीतियाँ-नीतियाँ आदि विषयों से संबंधित सूरदास की शब्दावली का संकलन करने पर हमें तत्कालीन जन-जीवन का अच्छा परिचय मिल जाता है।

सूरदास ने गोकुल-वृंदावन के ग्राम्य जीवन के चित्रण में जितनी रुचि दिखायी है, उतनी नागरिक जीवन का परिचय देने में नहीं। अयोध्या, मथुरा और द्वारका—प्राचीन भारत के इन तीन प्रमुख नगरों से संबद्ध अपने आराध्य की कथाएँ उसने गौण रूप में अपनायी हैं। इनमें से अयोध्या का तो उसने, एक प्रकार से नाम भर लिया है ; मथुरा के राजमार्ग पर अपने इष्टदेव के साथ वह कुछ समय के लिए घूमा है और द्वारका में वासुदेव कृष्ण के ऐश्वर्य-वर्णन में भी उसकी रुचि कम ही रमी है। अतएव नागरिक जीवन-संबंधी उसके संकेत बहुत सामान्य हैं। हाँ, इन नगरों की वास्तुकला और वैभव-संपन्नता का वर्णन अवश्य उसने कुछ विस्तार से किया है।

सूर-काव्य में प्राप्त तत्कालीन सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन पर प्रकाश डालने-वाली शब्दावली यदि संकलित की जाय तो उससे कवि के तद्विषयक ज्ञान का सहज ही अनुमान हो सकता है। सुविधा के लिए ऐसे शब्द-समूह को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—वातावरण परिचायक शब्द, सामान्य जीवन-चर्या-संबंधी शब्द और सांस्कृतिक जीवन-चर्या-संबंधी शब्द। प्रस्तुत परिच्छेद में प्रथम प्रकार के प्रयोगों के ही उदाहरण दिये जा रहे हैं।

वातावरण-परिचायक शब्द—

सूरदास ने श्रीकृष्ण की उन लीलाओं का ही विशेष रूप से वर्णन किया है जो उन्होंने गोकुल और वृंदावन के गोपों-गोपिकाओं के बीच में की थीं। गो-पालन, गैयों की सेवा करना, वन जाकर उनको चराना, उनसे प्राप्त दूध-दही को या उससे बनाये दही-माखन को निकटवर्ती मथुरा नगर में जाकर बेचना—ये ही उन गोप-गोपियों के दैनिक कार्य थे। उनका सारा समय प्रकृति के बीच ही बीतता था। उनका पारिवारिक और सामाजिक जीवन सुखी था; मथुरा के राजा से उनका संबंध इतना ही था कि वे वर्ष में एक-दो बार जाकर कर दे आते थे। जीवन के इन सब अंगों के परिचायक जो वातावरण-सूचक शब्द सूर-काव्य में मिलते हैं, स्थूल रूप से,उनको चार भागों में विभाजित किया जा सकता है—भौगोलिक, पारिवारिक, सामाजिक और राजनीतिक।

(क) भौगोलिक वातावरण-परिचायक शब्द—

सूरदास ने जिन कीट-पतंगों, छुद्र जंतुओं, जलचरों, पच्छियों, पशुओं, पेड़-पौधों, फलों और फूलों की चर्चा की है, उनमें निम्नलिखित मुख्य हैं:—

अ. कीट-पतंग तथा छुद्र जंतु—अलि (=चंचरीक, छपद, भँवर, मधुकर, मधुप, षटपद), अहि (=उरग, नाग, ब्याल, भुअंग), खद्योत, झिल्ली, दादुर, पिपीलिका, भृंगी, मूसा आदि।

अलि—जनि चालहि अलि बात पराई[1]।

चंचरीक—बिकसत कमलावली, चले प्रपुंज-चंचरीक[2]।

---

१. सागर० ३५६६। २. सागर० १०-२०५।

छपद—सूर अक्रूर छपद के मन मैं, नाहिंन त्रास दई[3]।

भँवर—झाँझ झिल्ली निर्झर निसान डफ, भेरि भँवर गुंजार[4]।

मधुकर—मधुकर हमहीं क्यों समुझावत[5]।

मधुप—बिन बिकसे जल कमल-कोष तैं मनु मधुपनि की माल[6]।

षट्पद—कहु षट्पद कैसैं खैयतु है, हाथिनि कै सँग गाँड़े[7]।

अहि—ज्यौं अहि-पति केंचुरि कौ, लघु-लघु छोरत हैं अंग-बदन[8]।

उरग—सूरदास प्रभु अभय ताहि करि, उरग - द्वीप पहुँचाए[9]।

नाग—बिपुल बाहु भरि कृत परिरंभन मनहु मलय द्रुम नाग[10]।

ब्याल—फूले ब्याल दुरे ते प्रगटे, पवन पेट भर खायौ[11]।

भुअंग—स्याम-भुअंग डस्यौ हम देखत, ल्यावहु गुनी बुलाई[12]।

खद्योत—रवि आगें खद्योत प्रकासा, मनि आगैं ज्यौं दीपक नासा[13]।

झिल्ली—झाँझ झिल्ली निर्झर निसान डफ, भेरि भँवर गुंजार[14]।

दादुर—मारू मार करत भट दादुर, पहिरे बिबिध सनाह[15]।

पिपीलिका—सब सौं बात कहत जमपुर की गज-पिपीलिका लौं[16]।

भृंगी—भृंगी री भजि स्याम-कमल-पद, जहाँ न निसि कौ त्रास[17]।

मूसा—जैसैं घर बिलाव के मूसा, रहस बिषय बस वैसौ[18]।

आ. जलचर—कच्छप, कमठ, ग्राह, नक्र, मकर या मगर, मीन आदि।

कच्छप—कच्छप अध आसन अनूप अति, डाँड़ी सहस फनी[19]।

कमठ—कमठ रूप धरि धर्‌यौ पीठि पर तहाँ न देखे हाऊ[20]।

---

३. सागर ३५६४।	४. सागार २८५३।
५. सा० ३५०३।	६. सा० १०-२०७।
७. सा० ३६०४।	८. सा० ११५८।
९. सा० ५७३।	१०. सा० ३२६०।
११. सा० ४१४१।	१२. सा० ७४३।
१३. सा० ६५०।	१४. सा० २८५३।
१५. सा० ३३१३।	१६. सा० १-१५१।
१७. सा० १-३३९।	१८. सा० २-१४।
१९. सा० २-२८।	२०. सा० १-०२२१।

ग्राह—लिए जात अगाध जल कौं गहे ग्राह-अनंग[२१]।

नक्र—तजि कै गरुड़ चले अति आतुर, नक्र चक्र करि मारयो[२२]।

मकर—सुधा सर जनु मकर क्रीड़त, इंदु डह डह डोल[२३]।

मगर—मेढ़ा, महिष, मगर, गुदरारौ, मोर, आखुमन वाहन गावत[२४]।

मीन—जहाँ सनक-सिव हंस,मीन मुनि, नख रवि-प्रभा प्रकास[२५]।

ङ. पक्षी—उलूक, कपोत या पारावत, काग या बायस, कीर (=सुक, सुवटा, सुवा), कुलाल, केकी (=मयूर या मोर), कोक या चक्रवाक, कोकिल (=कोकिला, पिक), खंजन या खंजरीट, गरुड़, गीध, चातक, (=पपीहरा, पपीहा , चकोर, तमचुर, बग, भरुही, मराल, हंस, लालमुनैयाँ, सचान, सारस और सारिका।

उलूक—रवि को तेज उलूक न जानै, तरनि सदा पूरन नभ ही री[२६]।

कपोत—कीर-कपोत मीन-पिक-सारँग-केहरि-कदली-छबि बिदली[२७]।

पारावत—बन उपबन फल फूल सुभग सर, सुक सारिका हंस पारावत[२८]।

काग—जैसे काग हंस की संगति, लहसुन संग कपूर[२९]।

बायस—बायस गहगहात सुनि सुन्दरि, बानी बिमल पूर्व दिसि बोली[३०]।

कीर—कीर-कपोत-मीन-पिक-सारँग-केहरि-कदली-छबि बिदली[३१]।

सुक—सारस हंस मोर सुक-स्रेनी, बैजयंति सम-तूल[३२]।

सुवटा—सूरदास नलिनी कौ सुवटा, कहि कौनैं पकरयौ[३३]।

सुवा—सुवा, चलि ता बन कौ रस पीजै[३४]।

कुलाल—जैसैं स्वान कुलाल के पाछैं लगि धावै[३५]।

केकी—केकी, कोक, कपोत और खग, करत कुलाहल भारी[३६]।

२१.	सा० १-६६।	२२.	सा० १-१०६।
२३.	सा० ६२७।	२४.	सा० ६७६।
२५.	सा० १-३३७।	२६.	सा० १६२४।
२७.	सा० ७२६।	२८.	सा० ४१६५।
२९.	सा० ३१५२।	३०.	सा० ४२७६।
३१.	सा० ७३६।	३२.	सा० १०४६।
३३.	सा० २-२६।	३४.	सा० १-३४०।
३५.	सा० २-६।	३६.	सा० २८५३।

मयूर—कुंचित केस मयूर-चंद्रिका-मंडल सुमन सुपाग[३७]।
मोर—मोर पंख सिर मुकुट बिराजत, मुख मुरली-धुनि सुभग सुहाई[३८]।
कोक—केकी, कोक, कपोत और खग, करत कुलाहल भारी[३९]।
चक्रवाक—चक्रवाक वृति-मनि दिनकर के, मृग-मुरली आधीन[४०]।
कोकिल—पपिहा गुंज, कोकिल बन कूँजत, अरु मोरनि कियौ गाजन[४१]।
कोकिला—कनक संपुट कोकिला-रव, बिबस ह्वै दै दान[४२]।
पिक—हरिन बराह, मो', चातक, पिक, जरत जीव बेहाल[४३]।
खंजन—खंजन नैन सुरँग रस माते[४४]।
खंजरीट—खंजरीट मृग मीन की गुरुता, नैननि सबै निवारी[४५]।
गरुड़—गरुड़-त्रास तैं जो ह्यौं आयौ[४६]।
गीध—गीध ताकौं देखि धायौ, लरयौ सूर बनाइ[४७]।
चातक—तृषित हैं सब दरस-कारन, चतुर चातक दास[४८]।
पपीहरा—तै सोइ रटत पपीहरा, तै सोइ बोलत मोर[४९]।
पपिहा—पपिहा गुंज, कोकिल बन कूँजत, अरु मोरनि कियौ गाजन[५०]।
चकोर—पद-नख-चंद चकोर बिमुख मन, खात अँगार मई[५१]।
तमचुर—तमचुर खग-रोर सुनहु, बोलत बनराई[५२]।
बग—घन धावन बग पाँति पटोसिर, बैरख तड़ित सुहाई[५३]।
भरुही—ज्यौं भारत भरुही के अंडा, राखे गज के घंट तरी[५४]।
मराल—कहि धौं मृगी मया करि हमसौं कहि धौं मधुप मराल[५५]।
हंस—जहाँ सनक-सिव हंस, मीन मनि, नख रबि प्रभा प्रकास[५६]।

---

३७. सा० २७-१७७७। ३८. सा० ६१५।
३९. सा० २८५३। ४०. सा० ३५६६।
४१. सा० ६२२। ४२. सा० २१३२।
४३. सा० ६१५। ४४. सा० २६६७।
४५. सा० ११९७। ४६. सा० ५७३।
४७. सा० ९-६०। ४८. सा० १०-२१८।
४९. सा० २८३०। ५०. सा० ६२२।
५१. सा० १-२६९। ५२. सा० १०-२०२।
५३. सा० ३३२४। ५४. सा० ४१५९।
५५. सा० १०९१। ५६. सा० १-३३७।

लाल-मुनैयनि—मनु लाल-मुनैयनि पाँति, पिंजरा तोर चली[५७]।

सचान—ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर दुक्यौ सचान[५८]।

सारस—सारस हंस मोर सुक-स्रेनी, बैजयंति सम-तूल[५९]।

सारिका—हंस सुक पिक सारिका अलि गुंज नाना नाद[६०]।

ई. पशु—अज, अजा, ऊँट, कपि (=बानर, मरकट), करिनि या गजिनी, कुरंग, मिरग (=मृग, मृगा), हरिनि, कूकर या स्वान, केहरि या सिंह, खर या गर्दभ, कुंजर (गज, गयंद, गय, नाग, हाथी), गाय (=गो, धेनु, सुरभी), जंबुक (=सृगाल, सियार, स्यार), तुरंग (=तुरग, तुरय, हय), बछरा, बराह (=बाराह, सूकर), बसह, (=बैल, बृष, बृषभ, बिलाव, बृक, भैंसौ, मंजार, महिष, मेढ़ा, रिच्छ, लंगूर, ससा आदि।

अज—दच्छ-सीस जो कुंड मैं जरयो। ताके बदलैं अज-सिर धरयो[६१]।

अजा—कामधेनु छाँड़ि कहा अजा लै दुहाऊँ[६२]।

ऊँट—सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनौं ऊँट-बृष-भैंसौ[६३]।

कपि—कपि सोभित सुभट अनेक संग, ज्यौं पूरन ससि सागर-तरंग[६४]।

बानर—बानर बीर हँसैंगे मोकौं, ताको बहुत डराऊँ[६५]।

मरकट—मनि मरकट कौं देत मूढ़ मति, मृगमद रज मैं सानहिं[६६]।

करिनि—मानौं ब्रज तैं करिनि चलि मदमाती हो[६७]।

गजिनी—मानहुँ न्हात मदन-धुजिनी-गज, सजनी गजिनी संग[६८]।

कुरंग—मेरे नैन कुरंग भए[६९]।

मिरग—संकट मैं एक संकट उपज्यौ, कहै मिरग सौं नारी[७०]।

५७.	सा० १०-२४।	५८.	सा० १-६७।
५९.	सा० १०४६।	६०.	सा० ३३१४।
६१.	सा० ४-५।	६२.	सा० १-१६६।
६३.	सा० २-१४।	६४.	सा० ६-१६६।
६५.	सा० ६-७५।	६६.	सा० ४१६६।
६७.	सा० २८६२।	६८.	सा० २६११।
६९.	सा० २२८०।	७०.	सा० १-२२१।

मृग—ज्यौं मृग नाभि-कमल निज अनुदिन निकट रहत नहिं जानत[७१]।

मृगा—जगत जननी करी बारी, मृगा चरि चरि आईं[७२]।

हरिन—हरिन बराह, मोर, चातक, पिक जरत जीव बेहाल[७३]।

कूकर—भजन बिनु कूकर सूकर जैसौ[७४]।

स्वान—सूधे होत न स्वान पूँछि ज्यौं, पचि पचि बेद मरे[७५]।

केहरि—कटि केहरि, कोकिल कल बानी, ससि मुख प्रभा धरी[७६]।

सिंह—हय वर, गय वर, सिंह, हंस वर, खग मृग कहँ हम लीन्हें[७७]।

खर—खर कौं कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन अंग[७८]।

गर्दभ—हय गयंद उतरि कहा गर्दभ चढ़ि धाऊँ[७९]।

कुंजर—हा करुनामय कुंजर टेर्यौ, रह्यो नहीं बल थाकौ[८०]।

गज—कृपा करी गज-काज, गरुड़ तजि धाइ गए जब[८१]।

गयंद—रजनीमुख बन तैं बने आवत, भावति मंद गयंद की लटकनि[८२]।

गय—हय बर, गय बर, सिंह, हंस बर, खग, मृग कहँ हम लीन्हें[८३]।

नाग—गेवैं बृषभ, तुरग अरु नाग। स्यार ग्यौस, निसि बोलैं काग[८४]।

हाथिनि—कहु षट्पद कैसैं खैयतु है, हाथिनि कैं सँग गाँडे[८५]।

गाइ—माधौ जू यह मेरी इक गाइ[८६]।

गो—राँभति गो खरिकनि मैं, बछरा हित धाइ[८७]।

धेनु—चरतिं धेनु अपनैं अपनैं रँग, अतिहिं सघन बन चारौ[८८]।

सुरभी—पसु मोहैं, सुरभी बिथकित, तृन दंतनि टेकि रहत[८९]।

जंबुक—समुझत नाहिं दीन दुख कोऊ, हरि भख जंबुक पानिहिं[९०]।

---

७१. सा० १-४६।
७२. सा० ६-६०।
७३. सा० ६१५।
७४. सा० २-१४।
७५. सा० ३७३०।
७६. सा० ६-६३।
७७. सा० १५५१।
७८. सा० १-३३२।
७९. सा० १-१६६।
८०. सा० १-११३।
८१. सा० ५८६।
८२. सा० ६१८।
८३. सा० १५५१।
८४. सा० १-२८६।
८५. सा० ३६६४।
८६. सा० १-५१।
८७. सा० १०-२०२।
८८. सा० ६११।
८९. सा० ६२०।
९०. सा० ४१६६।

सृगाल—फिरत सृगाल तज्यौ सब काटत चलत भो सिर लै भागि[९१]।

सियार—सूरदास प्रभु तुम्हरे भजन बिनु जैसैं सूकर-स्वान-सियार[९२]।

स्यार—रोवैं बृषभ, तुरग अरु नाग। स्यार द्यौस, निसि बोलैं काग[९३]।

तुरंग—कहाँ तुरंग, कहाँ गज केहरि, हंस सरोवर सुनियै[९४]।

तुरग—रोवैं बृषभ, तुरग अरु नाग। स्यार द्यौस निसि बोलैं काग[९५]।

तुरय—सायक, चाप, तुरय, बनिजति हौ, लिये सबै तुम जाहु[९६]।

हय—हय गय बर सिंह, हंस बर, खग, मृग कहँ हम लीन्हें[९७]।

बछरा—बछरा दियौ धन लगाइ, दुहत बैठि कै कन्हाइ[९८]।

बराह—हरिन बराह, मोर, चातक, पिक, जरत जीव बेहाल[९९]।

बाराह—धरि बाराह रूप सो मारयौ लै छिति दंत अगाऊ[१]।

सूकर—सो तन सूकर-स्वान-मीन ज्यौं, इहिं सुख कहा लियौ[२]।

बसह—अमरा सिव-रबि-ससि-चतुरानन, हय-गय बसह-मृग जावत[३]।

बैल—भक्ति बिनु बैल बिराने ह्वैहौ[४]।

बृष—सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनौ ऊँट-बृष भैंसौ[५]।

बृषभ—रोवैं बृषभ तुरग अरु नाग। स्यार द्यौस निसि बोलैं काग[६]।

बिलाव—जैसे घर बिलाव के मूसा, रहत बिषय-बस वैसो[७]।

बृक—गिरा रहित बृक-ग्रसित अजा लौं अंतक आनि गह्यौ[८]।

भैंसौ—सूरदास भगवंत-भजन बिनु मनौ ऊँट-बृष-भैंसौ[९]।

मंजार—खाइ जाइ मंजार, काज एकौ नहिं आवै[१०]।

महिष—मेढ़ा महिष मगर गुदरारौ, मोर आखुमन बाहन गावत[११]।

---

९१. सा० ६-१५८। ९२. सा० १-४१।
९३. सा० १-२८६। ९४. सा० १५५०।
९५. सा० १-२८६। ९६. सा० १५४९।
९७. सा० १५५१। ९८. सा० ६१९।
९९. सा० ६१५। १. सा० १०-२२१।
२. सा० २-१६। ३. सा० ९७६।
४. सा० १-३३१। ५. सा० २-१४।
६. सा० १-२८६। ७. सा० २-१४।
८. सा० १-२०१। ९. सा० २-१४।
१०. सा० १६१८। ११. सा० ९७६।

मेढ़ा—मेढ़ा महिष मगर गुदगरौ, मोर आखुमन वाहन गावत[१२]।

रिच्छप—रिच्छप तर्क बांलिहै मांसौं, ताकौ बहुत डराऊं[१३]।

लँगूर—सैन सहित सबै हते झपटि कै लंगूर[१४]।

ससा—ससा सियार अरु बन के पखेरू धिक धिक सबनि करे[१५]।

३. पेड़-पौधे—असोक, आम या रसाल, कदंब, कदली, करबीर, कुंद, कोबिद, ढाक, तमाल, ताल, तुलसी, नीप, नीम, पलास, पीपर, बदरी, बट, मलय और सिवारि या सेंवार और लवंगलता।

असोक—पुनि आयौ सीता जहँ बैठी, बन असोक के माहिं[१६]।

आम—जो मन जाकैं सोइ फल पावै, नीम लगाइ आम को खावै[१७]।

रसाल—नव बल्ली सुंदर नव नव तमाल। नव कमल महा नव नव रसाल[१८]।

कदम—आप कदम चढ़ि देखत स्याम[१९]।

कदली—कहि धौं री कुमुदिनि, कदली कछु, कहि बदरी करबीर[२०]।

करबीर—कहि धौं री कुमुदिनि, कदली कछु कहि बदरी करबीर[२१]।

कुंद—कुटज कुंद कदंब कोविद करनिकार सुकंज[२२]।

कोबिद—कुटज कुंद कदंब कोबिद करनिकार सुकंज[२३]।

ढाकहिं—सेमर-ढाकहिं काटि कै, बाँधौ तुम बेरौ[२४]।

तमाल—क्रीड़ा करत तमाल-तरुन-तर स्यामा स्याम उमँगि रस भरिया[२५]।

ताल—कहि धौं कुंद कदंब बकुल बट चंपक ताल तमाल[२६]।

तुलसी—कहि तुलसी तुम सब जानति हौ, कहँ घनस्याम सरीर[२७]।

नीप—अति बिस्तार नीप तरु तामैं, लै-लै जहाँ तहाँ [२८]।

नीम—जो मन जाकैं सोइ फल पावै, नीम लगाइ आम को खावै[२९]।

---

१२. सा० ६७६। १३. सा० ६-७५।
१४. सा० ६-६६। १५. सा० ४२०५।
१६. सा० ६-७५। १७. सा० ६२४।
१८. सा० २८४६। १९. सा० ७५८।
२०. सा० १०६१। २१. सा० १०६१।
२२. सा० ३३१४। २३. सा० ३३१४।
२४. सा० ६-४२। २५. सा० ६८८।
२६. सा० १०६१। २७. सा० १०६१।
२८. सा० ७८४। २९. सा० ६२४।

पलास—द्रुम-गन-मध्य पलास-मंजरी, उदित अगिनि की नाईं[३०]।

पीपर—अनुदिन अति उत्पात कहाँ लगि, दीजै पीपर कौ बन दाहिन[३१]।

बदरी—कहि धौं री कुमुदिनि, कदली कछु, कहि बदरी करबीर[३२]।

बट—कहि धौ कुंद, कदंब बकुल बट चंपक ताल तमाल[३३]।

मलय—जद्यपि मलय-बृच्छ जड़ काटै कर कुठार पकरै[३४]।

सिवार—पग न इत उत धरन पावत उरझि मोह सिवार[३५]।

सेंवार—सुभट मन मकर अरु केस सेंवार ज्यौं धनुष मछ चर्म कूरम बनाइ[३६]।

लवंगलता—फूले चंपक चमेलि फूलि लवंगलता बेलि सरस रसही फूल डोल[३७]।

ऊ. फल—अंब (=अँबुआ, रसाल), ककरी, खीरा, दाड़िम, निबुआ, श्रीफल आदि।

अंब—तहाँ मौरे अंब फूले निबुआ जहँ सदा फर फूले सरस रसही फूल डोल[३८]।

अँबुआ—मौरे अँबुआ अरु द्रुम बेली मधुकर परिमल भूले[३९]।

रसाल—नव बल्ली सुंदर नव नव तमाल। नव कमल महा नव नव रसाल[४०]।

ककरी—जब लै सूर कहति है उपजी सब ककरी करुई[४१]।

खीरा—बाहर मिलत कपट भीर यौं ज्यौं खीरा की रीति[४२]।

दाड़िम—चंपक बरन चरन कर कमलनि दाड़िम दसन लरी[४३]।

निबुआ—तहाँ मौरे अंब फूले निबुआ जहँ सदाफर फूले सरस रसही फूल डोल[४४]

श्रीफल—जबहिं सरोज धर्‌यौ श्रीफल पर तब जसुमति गई आइ[४५]।

ए. फूल—अंबुज(=इंदीवर, कंज, कमल, कुसेसय, जलज, जलजात, तामरस, बारिज, राजिव, राजीव, सतदल, सरोज), अतिसी, कदंब, कनिआरी, कनीर, कनेल, करना, कुंद, कुमुद, कुमुदिनि, कूजा, केतकि या केतकी, केवरा, चंपक, चमेलि

---

३०. सा० २८५३।
३१. सा० १४८८।
३२. सा० १०६१।
३३. सा० १०६१।
३४. सा० १-११७।
३५. सा० १-६१।
३६. सा० ४१८३।
३७. सा० २६१७।
३८. सा० २६१७।
३९. सा० २८५४।
४०. सा० २८४६।
४१. सा० ३२६६।
४२. सा० ४०४१।
४३. सा० ६-६३।
४४. सा० २६१७।
४५. सा० ६८२।

या चमेली, जूही, टेसू, निवारी, पाटल, बंधूक, बकुल, बेला, मरुआ या मरुवी, माधवी, मालती, मोगरौ, सेमर और सेवती।

अंबुज—श्री राधा अंबुज कर भरि-भरि छिरकति बारम्बार[४६]।

इंदीवर—इंदीवर राजीव कुसेसय जीते सब गुन जाति[४७]।

कंज—प्रति चरन मनु हेम बसुधा देति आसन कंज[४८]।

कमल—जागिए ब्रजराज कुँवर कमल-कुसुम फूले[४९]।

कुसेसय—इंदीवर राजीव कुसेसय जीते सब गुन जाति[५०]।

जलज—लोचन जलज मधुप अलकावलि कुंडल मीन सलोल[५१]।

जलजात—मनहु भोर जलजात लाल रँग भीने हो[५२]।

तामरस—तामरस लोचननि हाव भाव बिनु करे, मानति न मानिनी है मात रंग भीनी[५३]।

वारिज—साँवरो ढोटा को है माई बारिज-नैन बिसाल[५४]।

राजिव—राजिव दल-इंदीवर सतदल कमल कुसेसय जाति[५५]।

राजीव—इंदीवर राजीव कुसेसय जीते सब गुन जाति[५६]।

सतदल—राजिवदल इंदीवर सतदल कमल कुसेसय जाति[५७]।

सरोज—मंद मंद मुसकनि सरोज-मुख सोभा बरनि न जाइ[५८]।

अतिसी—अतिसी-कुसुम-कलेवर बूँदैं प्रतिबिम्बित निरधार[५९]।

कदंब—कहि धौं कुंद कदंब बकुल बट चंपक ताल तमाल[६०]।

कनिआरी—जाही जूही सेवती करना कनिआरी[६१]।

कनीर—कुल केतिकि करनि कनीर मिलि झूमक हो[६२]।

कनेल—तहाँ कमल केवरा फूले केतकी कनेल फूले संतनि हित फूल डोल[६३]।

---

४६. सा० ११५६। 47. सा० १८११।
४८. सा० १०-२१८। ४९. सा० १०-२०२।
५०. सा० १८११। ५१. सा० १०४६।
५२. सा० २८६३। ५३. सा० २७८६।
५४. सा० २८७५। ५५. सा० १८१३।
५६. सा० १८११। ५७. सा० १८१३।
५८. सा० २८७५। ५९. सा० ११५६।
६०. सा० १०६१। ६१. सा० १०६५।
६२. सा० २६०३। ६३. सा० २६१७।

करना—जाही जूही सेवती **करना** कनिग्रारी[६४] ।

कुंद—कहि धौं **कुंद** कदंब बकुल बट चंपक ताल तमाल[६५] ।

कुमुद—**कुमुद**-बृंद संकुचित भए भृंग लता भूले[६६] ।

कुमुदिनि—कहि धौं री **कुमुदिनि** कदली कछु कहि बदरी करबीर[६७] ।

कूजा—**कूजा** मरुग्रा कुंद सौं कहैं गोद पसारी[६८] ।

केतकि—कुल **केतकि** करनि कनीर मिलि झूमक हो[६९] ।

केतकी—**केतकी** कनेल फूले संतनि हित फूल डोल[७०] ।

केवरा—तहाँ कमल **केवरा** फूले[७१] ।

चंपक—नासिका **चंपक** कली कौ ग्रली भाये[७२] ।

चमेलि—फूले चंपक **चमेलि** फूलि लवँगलता बेलि सरस रसही फूल डोल[७३] ।

चमेली—बेलि **चमेली** मालती बूझति द्रुम-डारी[७४] ।

जूही—जाही **जूही** सेवती करना कनियारी[७५] ।

टेसू—द्वादस बन रतनारे देखियत चहुँदिसि **टेसू** फूले[७६] ।

निवारी—फूली **निवारी** एलि मोगरौ सेवति सुबेलि संतनि हित फूल डोल[७७] ।

पाटल—मिलत सनमुख पटल **पाटल** भरत मानहि जुही[७८] ।

बंधूक—ग्रधर बिंब-**बंधूक**-निरादर दसन कुंद ग्रनुहारी[७९] ।

बकुल—कहि धौं कुंद कदंब **बकुल** बट चंपक ताल तमाल[८०] ।

बेला—केतकी करबीर **बेला** बिमल बहु बिधि मंजु[८१] ।

मरुग्रा—कूजा **मरुग्रा** कुंद सौं कहैं गोद पसारी[८२] ।

मरुवौ—खूभौ **मरुवौ** मोगरौ मिलि झूमक हो[८३] ।

---

६४. सा० १०६५ ।
६५. सा० १०६१ ।
६६. सा० १०-२०२ ।
६७. सा० १०१६ ।
६८. सा० १०६५ ।
६९. सा० २६०३ ।
७०. सा० २६१७ ।
७१. सा० २६१७ ।
७२. सा० १०७६ ।
७३. सा० २६१७ ।
७४. सा० १०६५ ।
७५. सा० १०६५ ।
७६. सा० २८५४ ।
७७. सा० २६१७ ।
७८. सा० २८४४ ।
७९. सा० ११६७ ।
८०. सा० १०६१ ।
८१. सा० ३३१४ ।
८२. सा० १०६५ ।
८३. सा० २६०३ ।

माधवी—बेलि चमेली माधवी मिलि झूमक[८४] हो।

मालती—बूझहु धौं मालती कहूँ तैं पाए हैं तन चंदन[८५]।

मोगरो—खूझौ मरुवौ मोगरो मिलि झूमक हो[८६]।

सेमर—ज्यौं सुक सेमर-फूल बिलोकत जात नहीं बिन खाए[८७]।

सेवती—जाही जूही सेवती करना कनिआरी[८८]।

कीट पतंगों, पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों और फल-फूलों आदि के साथ साथ इनके प्रमुख अंगों-उपांगों या उनसे संबंधित अन्य पदार्थों की भी चर्चा सूरदास ने यत्र-तत्र की है। सम्मिलित रूप से यह सूची इस प्रकार है— अंकुर, अंकुस, अंडा, किंजल्क, केंचुरि, चोंच, थन, पंख, पराग, मकरंद, परिमल, पल्लव, पाँखि, पिंजरा, भुस, मंजरी, मृनाल, साँकर, सुंडि, सृंग, सौरभ आदि।

अंकुर—सुभग मानौ काम-द्रुम कौ नयौ अंकुर गाज[८९]।

अंकुस—मानैं नहीं महावत सतगुरु अंकुस ज्ञानहु टूट्यौ[९०]।

अंडा—ज्यौं भारत भरुही के अंडा राखे गज के घंट तरी[९१]।

किंजल्क—जहँ किंजल्क भक्ति नव लच्छन काम-ज्ञान रस एक[९२]।

केंचुरि—ज्यौं अहिपति केंचुरि कौ लघु-लघु छीरत है अँग बंदन[९३]।

चोंच—सूरदास सोने के पानी मढौं चोंच अरु पाँखि[९४]।

थन—बछरा दियौ थन लगाइ दुहत बैठि कै कन्हाइ[९५]।

पंख—पंख काटैं गिरयौ असुर तब गयौ लंका धाइ[९६]।

पराग—लीन्हें पुहुप-पराग-पवन कर क्रीड़त चहुँ दिसि धाइ[९७]।

मकरंद—कनकलता मकरंद झरत मनु ढालत पवन सँचार[९८]।

परिमल—मौरे अँबुआ अरु द्रुम बेली मधुकर परिमल भूले[९९]।

---

८४. सा० २६०३।	८५. सा० १०६१।
८६. सा० २६०३।	८७. सा० १-१००।
८८. सा० १०६५।	८९. सा० ११६१।
९०. सा० ४०३७।	९१. सा० ४१४६।
९२. सागर १-३३६।	९३. सागार ११५८।
९४. सा० ६-१६४।	९५. सा० ६१६।
९६. सा० ९-६०।	९७. सा० २८५३।
९८. सा० ११५६।	९९. सा० २८५४।

पल्लव—ते दूने अंकुर द्रुम पल्लव जे पहिले दव लागे[1] ।

पाँखि—सूरदास सोने कैं पानी मढ़ौं चोंच अरु पाँखि[2] ।

पिंजरा—मनु लाल-मुनैयनि पाँति पिंजरा तोरि चली[3] ।

भुस—टूटे कंधरु फूटी नाकनि कौ लौं धौं भुस खैहौ[4] ।

मंजरी—द्रुम-गन मध्य पलास मंजरी उदित अगिनि की नाईं[5] ।

मृनाल—बाहु मृनाल जु उरज कुंभ-गज निम्न नाभि सुभ गारी[6] ।

साँकर—धावत अध-अवनी आतुर तजि साँकर सत्संग छूट्यो[7] ।

सुंढि—कुच जुग कुंभ सुंढि रोमावलि नाभि सुहृद आकार[8] ।

सृंग—पाउँ चारि सिर सृंग गुंग मुख तब कैसे गुन गैहौ[9] ।

सौरभ—ज्यौं सौरभ मृग-नाभि बसत है द्रुम तृन सूँघि फिर्यौ[10] ।

इनके अतिरिक्त ग्राम और नगर के जिन भागों में मनुष्य वास और विचरण करता है, अथवा जिनसे किसी अन्य प्रकार से संबंधित है उनकी सूची भी सूर-काव्य में मिलती है। ऐसे स्थानों में कुछ मनुष्य द्वारा निर्मित हैं और कुछ प्रकृति द्वारा ; जैसे—

अखारा, अटा या अटारी, अवास, आस्रम, उपवन, कँगूरनि, कुंज, कूप, कोट, खाई, खोह, गुफा, गुहा, घाट, छीलर, डोंगर, दह, देहरी, नगपति, नदी, सरिता, परबत, पुलिन, फुलवारी बजार, बन, बाइ या बापी, बाग, बापिका, बारी, बिपिन, बीथी, भवन, महल, सदन, सभा, सरवर, सरितापति (=उदधि, सागर, सिंधु), सेतु, हाट आदि ।

अखारा—तहाँ देखि अप्सरा-अखारा, नृपति कछू नहिं बचन उचारा[11] ।

अटा—यातैं गरे न नैन-नीर तैं, अवधि अटा पर छाए[12] ।

---

१. सा० २८४८ ।
२. सा० ६-१६४ ।
३. सा० १०-२४ ।
४. सा० १-३३१ ।
५. सा० २८५३ ।
६. सा० ११६७ ।
७. सा० ४०३७ ।
८. सा० २६१० ।
९. सा० १-३३१ ।
१०. सा० २-२६ ।
११. सा० ६-४ ।
१२. सा० ३७८१ ।

अटारी—तुम्हरेहिं तेज प्रताप रही बचि, तुम्हरी यहै **अटारी**[१३] ।

अवास—पजरत धुजा पताक छत्र रथ, मनिमय कनक **अवास**[१४] ।

आस्रम—रिषि समीक कैं **आस्रम** आयौ[१५] ।

उपवन—ब्रज-जुवतिनि उपवन मैं पाए, लयौ उठाइ कंठ लपटानी[१६] ।

कँगूरनि—कंचन कोट कँगूरनि की छबि, मानौ बैठे मैन[१७] ।

कुंज—कुंज-कुंज-प्रति कोकिल कूजति, अति रस बिमल बढ़ी[१८] ।

कूप—मानै मठ कूप बाइ, सरवर कौ पानी[१९] ।

कोट—दच्छिन दिसा तीर सागर कैं, कंचन कोट गोमती खाई[२०] ।

खाई—दच्छिन दिसा तीर सागर कैं, कंचन कोट गोमती खाई[२१] ।

खोह—सूर सुबस्ती छाड़ि परम सुख, हमैं बतावत खोह[२२] ।

गुफा—पुहुमि दाहिनी देहि, गुफा बसि मोहि न पावे[२३] ।

गुहा—जनु सु अहेरी हति जादवपति गुहा पींजरी तोरी[२४] ।

घाट—भौंह मरोरै मटकि कै (री) रोकत जमुना-घाट[२५] ।

छीलर—सागर की लहरि छाँड़ि, छीलर कस न्हाऊँ[२६] ?

डूँगर—डूँगर कौ बल उनहि बताऊँ, ता पाछैं ब्रज खोदि बहाऊँ[२७] ।

दह—सूर स्याम पीतांबर काछे, कूदि परे दह मैं भहराइ[२८] ।

देहरी—जिनकी सकुच देहरी दुर्लभ, तिनमैं मूँड़ उघारै री[२९] ।

नगपति—मानौ घन पावस मैं नगपति है छायौ[३०] ।

नदी—उमँगी प्रेम नदी-छबि-पावैं, नंद-सदन-सागर कौं धावैं[३१] ।

सरिता—तैसीयै भरि सरिता सरोवर, उमँगि चली मिति फोरि[३२] ।

१३.	सा० ६-१०० ।	१४.	सा० ६-८३ ।
१५.	सा० १-२६०१ ।	१६.	सा० १०-७८ ।
१७.	सा० ३०२० ।	१८.	सा० २८५३ ।
१९.	सा० ६-६६ ।	२०.	सा० ४२६२ ।
२१.	सा० ४२६२ ।	२२.	सा० ३५३६ ।
२३.	सा० १६१८ ।	२४.	सा० ४२१६ ।
२५.	सा० २८७४ ।	२६.	सा० १-१६६ ।
२७.	सा० ६२५ ।	२८.	सा० ५३६ ।
२९.	सा० १०-१३२ ।	३०.	सा० ६-६६ ।
३१.	सा० १०-३२ ।	३२.	सा० २८३० ।

परबत—अति आनंद नंद रस भीने । **परबत** सात रतन के दीने[33] ।

पुलिन—तैसोइ जमुना **पुलिन** परम पुनीत सब सुखदाइ[34] ।

फुलबारि—हँसि-हँसि हरि पर डारहीं, अरुन नैन **फुलबारि**[35] ।

बजार—गोकुल-हाट-**बजार** करत जु लुटावन रे[36] ।

बन—**बन** उपवन फल फूल सुभग सर, सुक सारिका हंस पारावत[37] ।

बाइ—भाने मठ कूप **बाइ**, सरवर को पानी[38] ।

बापी—सागर-सूर बिकार भरयौ जल, बधिक-अजामिल **बापी**[39] ।

बाग—छोड़ी नारि बिचारि पवन-सुत, लंक **बाग** बसहीं[40] ।

बापिका—नैन कमल दल बिसाल, प्रीति-**बापिका**-मराल[41] ।

बारी—जगत जननी करी **बारी**, मृगा चरि चरि आईं[42] ।

बिपिन—और कहाँ लगि कहौं रूप निधि, बृंदा-**बिपिन** बिराज[43] ।

बीथिनि—मानहुँ मदन मंडली रचि पुट-**बीथिनि** बिपिन बिहार[44] ।

भवन—सूनौ **भवन** सिंहासन सूनौ, नाहीं दसरथ ताता[45] ।

महलनि—तरनि किरनि **महलनि** पर झाईं, इहै मधुपुरी नाम[46] ।

सदन—परम दुखी कौसल्या जननी चलौ **सदन** रघुराई[47] ।

सभा—जब कही पवनसुत बंधु बात । तब उठी **सभा** सब हरष गात[48] ।

सरवर—भानै मठ कूप बाइ, **सरवर** कौ पानी[49] ।

सरितापति—तबहूँ और रह्यौ **सरितापति** आगैं जोजन सात[50] ।

उदधि—मुख-स्याम-पूरन-चंद कौं, मनु उमँगि **उदधि** तरँग[51] ।

सागर—**सागर** पर गिरि, गिरि पर अंबर, कपि घन कैं आकार[52] ।

---

३३. सा० १०-३२ ।
३४. सा० २८३० ।
३५. सा० २८६४ ।
३६. सा० १०२८ ।
३७. सा० ४१६५
३८. सा० ६-६६ ।
३९. सा० १-१४० ।
४०. सा० ६-६१ ।
४१. सा० १०-२०५ ।
४२. सा० ६-६० ।
४३. सा० २८५३ ।
४४. सा० २८५३ ।
४५. सा० ६-४६ ।
४६. सा० ३०२० ।
४७. सा० ६-५३ ।
४८. सा० ६-१६६ ।
४९. सा० ६-६६ ।
५०. सा० ६-१०४ ।
५१. सा० २८३० ।
५२. सा० ६-१२४ ।

सिंधु—सिंधु-तट उतरे राम उदार[५३]।

सेतु—सेतु-बंध करि तिलक, सूर प्रभु रघुपति उतरे पार[५४]।

हाट—गोकुल-हाट-बजार करतु जु लुटावत रे[५५]।

(ख) पारिवारिक वातावरण-परिचायिक शब्द—

अग्रज, दाऊ, अर्धंगी, (=घरनी, तिया, तिरिया, त्रिय, दारा, पत्नी, बनिता, भामिनी), अली (सखी, सजनी, सहेलरी, सहेली), कंत (=पति,पिय), गुरु-भगिनी, जननी (महतारी, मां, माई, मातृ, माता, मातु, मैया), जमाता, जार, जेठ, डिंभ, ढोटा (ढोहरा, पुत्र, पूत, बालक, लरिका, सुत), तनया, दंपति, दास (=भृत्य, सेवक), दासी या लौंडी, देवर, ननद या ननदी, ठाकुर (=नाथ, स्वामी), नानी, परदेसिनि, पास-परोसिनैं, पाहुनी, पिता (=पितु, बाप), प्यौसार, बंधु या बंधू, भाई (=भैया, भ्रात), बधू, भगिनी या भैनी, मेहमान, संतान, सखा, सजन, समधी, ससुर, सहोदर, सास या सासु, सौति, स्वामिनी आदि।

अग्रज—मनु हलधर अग्रज मोहन के, स्रवननि सब्द परे[५६]।

दाऊ—मैं अपने दाऊ सँग जैहौं, बन देखैं सुख पावत[५७]।

अर्धंगी—अर्धंगी पूछति मोहन सौं कैसे हितू तुम्हारे[५८]।

घरनी—तरुवर-मूल अकेली ठाढ़ी, दुखित राम की घरनी[५९]।

तिया—तब हरि तिनसौं कहि समुझाई। सुनौ तिया तुम काहैं आई[६०]।

तिरिया—तिरिया रैनि घटे सचु पावे[६१]।

त्रिय—ऐसी कृपा करी नहिं, जब त्रिय नगन समय पति राखी[६२]।

दारा—पर-दारा कैं जाइ, आपु कत लज्जा हारे[६३]।

पत्नी—मनु रघुपति भयभीत सिंधु पत्नी प्योसार पठाई[६४]।

---

५३. सा० ९-११४। ५४. सा० ९-१२४।
५५. सा० १०-२८। ५६. सा० ३४९५।
५७. सा० ४२४। ५८. सा० ४२३०।
५९. सा० ९-७३। ६०. सा० ८००।
६१. सा० ३२७३। ६२. सा० ५६६।
६३. सा० १६१८। ६४. सा० ९-१२४।

वनिता—सुत-संतान-स्वजन-**वनिता**-रति, धन समान उनई[६५] ।

भामिनि—गहि पद 'सूरजदास' कहै **भामिनि**, राज बिभीषन पायौ[६६] ।

अली—गुन गावत मंगलगीत, मिलि दस पाँच **अली**[६७] ।

सखी—आजु **सखी** चलु भवन हमारैं, सहित दोउ रघुबीर[६८] ।

सजनी—उनके बचन सत्य करि **सजनी**, बहुरि मिलैंगे आइ[६९] ।

सहेलरी—हरषीं सखी-**सहेलरी** (हो), आनँद भयौ सुभ-जोग[७०] ।

सहेली—बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु-पिता न **सहेली**[७१] ।

कंत—फागु खेलावहु संग **कंत** । हा हा करि तृन गहत दंत[७२] ।

पति—मातु-पिता-**पति**-बंधु सजन जन, सखि आँगन सब भवन भरयौ री[७३] ।

पिय—गौर बरन मेरे देवर सखि, **पिय** मम स्याम सरीर[७४] ।

गुरु-भगिनी—रिषि-तनया कह्यौ, मोहिं बिबाहि । कच कह्यौ, तू **गुरु-भगिनी** आहि[७५] ।

जननी—परम दुखी कौसल्या **जननी**, चलौ सदन रघुराई[७६] ।

महतारी—कहि, जाको ऐसो सुत बिछुरै, सो कैसै जीवै **महतारी**[७७] ।

मा—सूर स्याम यह कहत जननि सौं, रहि री **मा** धीरज उर धारे[७८] ।

माइ—कबहुँक लछिमन पाइ सुमित्रा, माइ **माइ** कहि मोहिं सुनैहै[७९] ।

मात—नंदहि तात-तात कहि बोलत, मोहिं कहत है **मात**[८०] ।

माता—राम जू कहाँ गए री **माता**[८१] ।

मातु—बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, **मातु**-पिता न सहेली[८२] ।

मैया—पाछैं चितै फेरि-फेरि **मैया-मैया** बोलै[८३] ।

जामातनि—तनया **जामातनि** कौं समदत, नैन नीर भरि आए[८४] ।

---

६५. सा० १-५० । ६६. सा० ६-११६ ।
६७. सा० १०-२४ । ६८. सा० ६-४४ ।
६९. सा० ६-४४ । ७०. सा० १०-४० ।
७१. सा० ६-६४ । ७२. सा० २८५१ ।
७३. सा० १८७२ । ७४. सा० ६-४४ ।
७५. सा० ६-१७३ । ७६. सा० ६-५३ ।
७७. सा० १०-११ । ७८. सा० ५६५ ।
७९. सा० ६-८१ । ८०. सा० १०-२१६ ।
८१. सा० ६-४६ । ८२. सा० ६-६४ ।
८३. सा० १०-१०१ । ८४. सा० ६-२७ ।

जार—तबतैं घर घेरा चल्यौ स्याम तुम्हारे जार[८५]।

जेठी—जमुना जस की रासि चहूँ जुग, जम जेठी जग की महतारी[८६]।

डिंभ—गहि मनि खंभ डिंभ डग डोलैं। कल बल बचन तोतरे बोलैं[८७]।

ढोटा—जसुमति-ढोटा व्रज की सोभा। देखि सखी, कछु औरै गोभा[८८]।

छोहरा—मो आगे को छोहरा, जीत्यौ चाहै मोहि[८९]।

पुत्र—त्राहि-त्राहि कहि, पुत्र-पुत्र कहि, मातु सुमित्रा रोयौ[९०]।

पूत—सुंदर नंद महरि कैं मंदिर। प्रगट्यो पूत सकल सुख-कंदर[९१]।

बालक—पसु-पंछी तृन-कन त्याग्यौ अरु बालक पियौ न पयौ[९२]।

लरिका—कान तोरि वह लेत सबनि के, लरिका जानत जाहि[९३]।

सुत—सुत-संतान-स्वजन-बनिता-रति, घन समान उनई[९४]।

तनया—सुंदरी वृषभानु-तनया, नैन चपल कुरंग[९५]।

दंपति—आयौ आयौ पिय रितु बसंत। दंपति मन सुख बिरह अंत[९६]।

दास—तृषित हैं सब दरस-कारन, चतुर चातक दास[९७]।

भृत्य—प्रेम मत्त फिरत भृत्य, गुनत गुन तिहारे[९८]।

सेवक—इंद्र समान हैं जाके सेवक नर बपुरे की कहा गनी[९९]।

दासी—चौदह सहस किन्नरी जेती, सब दासी हैं तेरी[१]।

लौंड़ी—लौंड़ी की डौंड़ी जग बाजी, बढ़यौ स्याम अनुराग[२]।

देवर—गौर बरन मेरे देवर सखि, पिय मम स्याम सरीर[३]।

ननद—सासु ननद घर त्रास दिखावैं[४]।

---

८५. सा० १६१८। ८६. सा० ४२०५।
८७. सा० १०-११७। ८८. सा० १०-३२।
८९. सा० १६१८। ९०. सा० ९-१५१।
९१. सा० १०-३२। ९२. सा० ९-४६
९३. सा० १०-२२०। ९४. सा० १-५०
९५. सा० २८३५। ९६. सा० २८५?
९७. सा० १०-२१८। ९८. सा० १०-२०५
९९. सा० १-३९।
१. सा० ९-७९। २. सा० ३६५२।
३. सा० ९-४४। ४. सा० १९२१।

ननदी—**ननदी** तौ न दिये बिनु गारी रहति, सासु सपनेहु नहिं ढरकौं[५]।

ठाकुर—सेवक जूझि परे रन भीतर, **ठाकुर** तउ घर आवे[६]।

नाथ—जनि पूछौ तुम कुसल **नाथ** की, सुनौ भरत बलबीर[७]।

स्वामी—सूरदास प्रभु अधम उधारन सुनियै श्रीपति **स्वामी**[८]।

नानी—कहा कहत मौसी के आगे जानत **नानी**-नानन[९]।

परदेसिनि—मैं **परदेसिनि** नारि अकेली[१०]।

पास-परोसिनैं—हरषीं **पास-परोसिनैं** (हो), हरष नगर के लोग[११]।

पाहुनी—**पाहुनी**, कर दै तनक मह्यो[१२]।

पिता—बिनु रघुनाथ और नहिं कोऊ, मातु-**पिता** न सहेली[१३]।

पितु—कह्यौ **पितु** मोसौं सोइ सतिभाव[१४]।

बाप—सूर परेखौ काकौ कीजै, **बाप** कियौ जिन दूजौ[१५]।

प्योसार—मनु रघुपति भयभीत सिंधु पत्नी **प्योसार** पठाई[१६]।

बंधु—भाई-**बंधु** कुटुंब-सहोदर, सब मिलि यहै बिचार्‌यौ[१७]।

बंधू—**बंधू**, करियौ राज सँभारे[१८]।

भाई—रेखा खैंचि, बारि बंधन भय, हा रघुबीर कहाँ हौ **भाई**[१९]।

भैया—जबहिं मोहिं देखत लरिकनि सँग तबहिं खिझत बल **भैया**[२०]।

भ्रात—**भ्रात**-मुख निरखि राम बिलखाने[२१]।

बधू—कबहुँक कृपावंत कौसिल्या, **बधू** बधू कहि मोहिं बुलैहैं[२२]।

भगिनी—रिषि-तनया कह्यौ मोहिं बिबाहि। कच कह्यो, तू गुरु-**भगिनी** आहि[२३]।

भैनी—सुनहु सूर नाते की **भैनी**, कहति बात हरषात[२४]।

---

५. सा० १६१६।
६. सा० ६-१५४।
७. सा० ६-१५१।
८. सा० १-१४८।
९. सा० ३३२६।
१०. सा ६-६४।
११. सा १०-४०।
१२. सा० १०-१८२।
१३. सा० ६-६४।
१४. सा० १-२७५।
१५. सा० ३६५०।
१६. सा० ६-१२४।
१७. सा० १-३३६।
१८. सा० ६-५४।
१९. सा० ६-५६।
२०. सा० १०-२१७।
२१. सा० ६-५२।
२२. सा० ६-८१।
२३. सा० ६-१७३।
२४. सा० १३६०।

मेहमानी—अपनौ पति तजि और बतावत, मेहमानी कछु खाते[२५]।

संतान—सुत-संतान-स्वजन-बनिता-रति घन समान उनई[२६]।

सखा—इतनी कहत स्यामघन आए, ग्वाल सखा सब चीन्हें[२७]।

सजन—मातु-पिता-पति-बन्धु सजन जन, सखि आँगन सब भवन भर्‌यो री[२८]।

समधी—ताल-पखावज चले बजावत, समधी सोभा कौं[२९]।

ससुर—तजी सीख सब सासु ससुर की, लाज जनेऊ जारे[३०]।

सहोदर—भाई-बंधु कुटुंब सहोदर, सब मिलि यहै बिचार्‌यो[३१]।

सास—नाहीं ब्रज-बास सास, ऐसी बिधि मेरौ[३२]।

सासु—सासु-नँनदि घर-घर लिए डोलतिं, याकौ रोग बिचारौ री[३३]।

सौति—सासु की सौति सुहागिनि सो सखि, अति ही पिय की प्यारी[३४]।

स्वामिनि—कौसिल्या सौं कहति सुमित्रा, जनि स्वामिनि दुख पावै[३५]।

इनके अतिरिक्त 'गुसाईं' शब्द का प्रयोग 'सूरसागर' के एक पद में पिता के लिए आदरसूचक संबोधन के रूप में किया गया है—

होहु बिदा घर जाहु गुसाईं, माने रहियौ नात[३६]।
धकधकात हिय बहुत सूर उठि चले नंद पछितात।

'तात' या 'ताता' का प्रयोग तो सूरदास ने पिता, पुत्र और प्रभु, तीनों अर्थों में किया है; जैसे—

१. तात (=पिता) बचन रघुनाथ माथ धरि जब बन गौन कियौ[३७]।

२. सूनौ भवन सिंहासन सूनौ, नाहीं दसरथ ताता (=पिता)[३८]।

---

२५. सा० ३५१६। २६. सा० १-५०।
२७. सा० १०-२१६। २८. सा० १८७२।
२९. सा० १-१५१। ३०. सा० ३५६६।
३१. सा० १-३३६। ३२. सा० १०-२७६।
३३. सा० १०-१३५। ३४. सा० ६-४४।
३५. सा० ६-१५२। ३६. सा० ३१२४।
३७. सा० ६-४६ ३८. सा० ६-४६।

३. चौदह बरष तात (=पिता) की आज्ञा मोपै मेटि न जाई[३९]।

४. मिले हनु, पूछी यह बात।
महा मधुर प्रिय बानी बोलत, साखामृग तुम किहिं के तात (=पुत्र)[४०]।

५. कहत नंद, जसुमति, सुनि बात।
अब अपनैं जिय सोच करति कत, जाके त्रिभुवन पति से तात (=पुत्र)[४१]।

६. जानिहौं अब बाने की बात।
मोसौं पतित उधारौ प्रभु जी, तौ बदिहौं निज तात (=प्रभु)[४२]!

(ग$_{६}$) सामाजिक वातावरण-परिचायक शब्द—

अहिर, अहीरी, आभीर, कनधार (=केवट, धीवर, मल्लाह), कपालिक, कहार, कुलाल, गंधिनि, ग्वैया, गनिका या बेस्या, गारुड़ी, चोलिनि, जगा, जमन, जरैया, जाचक, जैनी, ठगिनि, जोगी, ढाढ़िनि-ढाढ़ी, तपसी, दरजिनि, दरजी, दाई, दानव, नट, नाइनि, निसाचर, पसुपति, पारधी, बंदीजन, बटाऊ, बढ़ैया (=बढ़ई), बारिनि, बैद्य, ब्रह्मचारी, भाट, भिच्छुक, महावत, मागध, मालिनि, माली, रँगरेजिनि, रजक, राकस, सतगुरु, सुतहार, सुनार, सूत आदि।

अहिर—और अहिर सब कहाँ तुम्हारे, हरि मौं धेनु दुहाई[४३]।

अहीरी—नैंकहूँ न थकत पानि निरदई अहीरी[४४]।

आभीर—बरन बान बसन कर लै, बनत है आभीर[४५]।

कनधार—राम-प्रताप सत्य सीता कौ, यहै नाव-कनधार[४६]।

केवट—लै भैया केवट उतराई[४७]।

धीवर—बार-बार श्रीपति कहैं धीवर नहिं मानै[४८]।

मल्लाह—जैसें बिनु मल्लाह सुन्दरी, एक नाउ पर चढ़ई[४९]।

कपालिक—जा परसैं जीतैं जम-सेनी, जमन, कपालिक, जैनी[५०]।

---

३९. सा० ९-५१। ४०. सा० ९-६९।
४१. सा० ८८६। ४२. सा० १-१७९।
४३. सा० ७४०। ४४. सा० ३४८।
४५. सा० ३७६८। ४६. सा० ९-८९।
४७. सा० ९-४०। ४८. सा० ९-४२।
४९. सा० ३२९६। ५०. सा० ९-११।

कहार—भरत चले पथ-जीव निहार। चले नहीं ज्यौं चलैं कहार[५१]।

कुलाल—बिधि कुलाल कीन्हें काँचे घट ते तुम आनि पकाए[५२]।

गंधिनि—गंधिनि ह्वै जाउँ निरखि नैननि सुख देउँ[५३]।

गढ़ैया—ब्रज बधु कहैं बार-बार धन्य रे गढ़ैया[५४]।

गनिका—मानहुँ बिट सबहिन अवलोकत, परसत गनिका गात[५५]।

बेस्या—सम पंडित बेस्या बधू, हरि होरी है[५६]।

गारुड़ी—नंद सुवन गारुड़ी बुलावहु[५७]।

चोलिनि—चोलिनि ह्वै जाउँ निरखि नैननि सुख देउँ[५८]।

जगा—नंद उदौ सुनि आयौ हो, बृषभानु को जगा[५९]।

जमन—जा परसे जीतैं जम-सेनी, जमन, कपालिक, जैनी[६०]।

जरैया—बहु बिधि जरि करि जराउ रे जरैया[६१]।

जाचक—आनंदित बिप्र, सूत, मागध, जाचक गन, उमँगि असीस देत सब हित हरि के[६२]।

जैनी—जा परसैं जीतैं जम सेनी, जमन-कपालिक-जैनी[६३]।

जोगिनि—कै रघुनाथ तज्यौ प्रन अपनौ, जोगिनि दसा गही[६४]।

जोगी—जोगी कौन बड़ौ संकर तैं, ताकौं काम छरै[६५]।

ढाढ़ी औ ढाढ़िन—ढाढ़ी औ ढाढ़िन गावैं, ठाढ़े हुरके बजावैं हरसि असीस देत मस्तक नचाइ कै[६६]।

तपसी—रावन भेष धरयो तपसी कौ, कत मैं भिच्छा मेली[६७]।

दरजिनि—दरजिनि ह्वै जाउँ निरखि, नैननि सुख देउँ[६८]।

---

५१. सा० ५-४। ५२. सा० ३७८१।
५३. सा० १०७५। ५४. सा० १०-४१।
५५. सा० २८५३। ५६. स० २६१४।
५७. सा० ७४६। ५८. सा० १०७५।
५९. सा० १०-३९। ६०. सा० ९-११।
६१. सा० १०-४१। ६२. सा० १०-३०।
६३. सा० ९-११। ६४. सा० ९-९१।
६५. सा० १-३५। ६६. सा० १०-३१।
६७. सा० ९-६४। ६८. सा० १०७५।

दरजी—आइ दरजी गयौ बोलि ताकौं लयौ, सुभग अंग साजि उन बिनय कीने[६९]।

दाई—कंचन-हार दिएँ नहिं मानति, तुही अनोखी दाई[७०]।

दानव—दानव वृषपर्वा बल भारी। नाम सर्मिष्ठा तासु कुमारी[७१]।

नट—देखत ही उड़ि गए हाथ तैं, भए बटा नट के[७२]।

नाइन—नाइन बोलहु नव रंगी (हो), ल्याउ महावर बेग[७३]।

निसाचर—हैं केतिक ये तिमिर-निसाचर, उदित एक रघुकुल के भानुहिं[७४]।

पसुपति—जनु सुरभी बन बसति बच्छ बिनु परबस पसुपति की बहराई[७५]।

पारधि—हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरियाँ, पारधि साधे बान[७६]।

बंदीजन—बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि-सुनि दूरि दूरि तैं आए[७७]।

बटाऊ—मधुप बिराने लोग बटाऊ[७८]।

बढ़ैया—पालनो अति सुंदर गढ़ि ल्याउ रे बढ़ैया[७९]।

बारिनि—अच्छत दूब लिये रिषि ठाढ़े, बारिनि बंदनवार बँधाई[८०]।

बैद्य—कह्यौ हम जज्ञ-भाग नहिं पावत। बैद्य जानि हमकौं बहरावत[८१]।

ब्रह्मचारी—आपुहिं पुरुष आपहीं नारी। आपुहिं बानप्रस्थ ब्रह्मचारी[८२]।

भाट—मागध, सूत, भाट धन लेत जुरावन रे[८३]।

भिच्छुक—बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि-सुनि दूरि-दूरि तैं आए[८४]।

महावत—माथैं नहीं महावत सतगुरु, अंकुस ज्ञानहु टूट्यौ[८५]।

मागध—मागध, सूत, भाट धन लेत जुरावन रे[८६]।

मालिनि—लक्ष्मी-सी जहँ मालिनि बोलै। बंदन-माला बाँधत डोलै[८७]।

माली—कीन्हौ मधुबन चौर चहूँदिसि, माली जाइ पुकारयौ[८८]।

---

६९. सा० २०४७।
७०. सा० १०-१६।
७१. सा० ९-१७४।
७२. सा० २३८९।
७३. सा० १०-४०।
७४. सा० ९-९५।
७५. सा० ९-१६६।
७६. सा० १-९७।
७७. सा० १०-३५।
७८. सा० ३६७०।
७९. सा० १०-४१।
८०. सा० १०-१९।
८१. सा० ९-३।
८२. सा० ४०९४।
८३. सा० १०-२८।
८४. सा० १०-३५।
८५. सा० ४०३७।
८६. सा० १०-२८।
८७. सा० १०-३२।
८८. सा० ९-१०३।

रँगरेजिनी—जावक सौं कहँ पाग रँगाई, रँगरेजिनी मिली कोउ बाल[८९]।

रजक—लियौ रथ तैं उतरि रजक मारयो जहाँ, कंदरा तैं निकसि सिंह बाला[९०]।

राकस—यह राकस की जाति हमारी, मोह न उपजै गात[९१]।

सतगुरु—माथैं नहीं महावत सतगुरु, अंकुस ज्ञानहु टूट्यौ[९२]।

सुतहार—ले आयौ गढ़ि डोलना (हो) बिसकर्मा सुतहार[९३]।

सुनार—बिसकर्मा सुतहार, रच्यौ काम है सुनार[९४]।

सूत—मागध, सूत, भाँट धन लेत जुरावन रे[९५]।

(घ) राजनीतिक वातावरण परिचायक शब्द—

उजीर, कटक (=चमू, दल, फौज, सेना, [चतुरंगिनि], सैन), खवास, चर (दूत, धावन), छरीदार, जगाती, जसूस, जोधा (=भट, सुभट, सूर, सूरमा), द्वारपाल, नकीब, नरपति, (=नृप, नृपति, भुवाल, भुवाला, भूप, भूपति, भूपाल, राई, राजा), रानी, परजा या प्रजा, पहरुआ, पाटरानी, पायक, पौरिया, प्रतिहार, बंदी, बनैत या बानैत, मंत्री, मोदी, रखवारे, रथी, सारथी या सूत, सुलतान आदि।

उजीर—पाप उजीर कह्यो सोइ मान्यौ, धर्म सुधन लुट्यौ[९६]।

कटक—कटक अगिनित जुरयौ, लंक खरभर परयौ, सूर कौ तेज धर धूरि ढाँप्यौ[९७]।

चमू—चमू चंचल चलति नाहीं, रही है पुर तीर[९८]।

दल—साल्व, दंतवक्र बारानसी कौ नृप, चढ़े दल साजि मनौ अभ्र छाए[९९]।

फौज—फौज असत-संगति की मेरैं, ऐसौ हौं मैं ईस[१]।

सेना—घेरयौ है अरि मन्मथ लै, चतुरंगिनि सेना साथ[२]।

---

८९. सा० २४८५।
९०. सा० ३०४८।
९१. सा० ९-७९।
९२. सा० ४०३७।
९३. सा० १०-४०।
९४. सा० १०-४१।
९५. सा० १०-२८।
९६. सा० १-६४।
९७. सा० ९-१०६।
९८. सा० ३७६८।
९९. सा० ४१८२।
१. सा० १-१४४।
२. सा० ३३१३।

सैन—इंद्रजित चढ्यौ निज **सैन** सब साजि कै, रावरी सैनहूँ साज कीजै[३]।

खवास—मोदी लोभ, **खवास** मोह के, द्वारपाल अहँकार[४]।

चर—कोकिल-कूजत-कल-हंस मोर। रथ सैल सिला पद **चर** नकार[५]।

दूत—पायक मन, बानैत अधीरज, सदा दुष्ट-मति **दूत**[६]।

धावन—घन **धावन** बगपाँति पटो सिर, बैरख तड़ित सुहाई[७]।

छरीदार—**छरीदार** बैराग बिनोदी, झिरकि बाहिरैं कीन्हे[८]।

जगाती—सूर स्याम अब भए **जगाती**, वै दिन दिन सब बिसराए[९]।

जसूस—ऊधौ मधुप **जसूस** देखि गयौ, टूट्यौ धीरज पानि[१०]।

जोधा—प्रगट कपाट बिकट दीन्हे हैं, बहु **जोधा** रखवारे[११]।

भट—मारु मार करत **भट** दादुर, पहिरे बिबिध सनाह[१२]।

सुभट—जे-जे तुव सूर **सुभट**, कीट समन लेखौं[१३]।

सूरमा—सूरदास प्रभु परम **सूरमा**, जानै नंदकुमार[१४]।

द्वारपाल—मोदी लोभ खवास मोह के, **द्वारपाल** अहँकार[१५]।

नकीब—अपजस अति **नकीब** कहि टेर्‌यौ, सब सिर आयसु मान्यौ[१६]।

नरपति—सस्त्र धन छाँड़ि कै भाजि **नरपति** गए जादवनि लै सु हरि दियौ लुटाई[१७]।

नृप—साल्व, दंतवक्र बारानसी कौ **नृप** चढ़े दल साजि मनौ अभ्र छाए[१८]।

नृपति—जरासंध सिसुपाल **नृपति** तैं, जीते हैं उठि अरघ चढ़ावहु[१९]।

भुवाल—करुवौ बचन स्रवन सुनि मेरौ, अति रिस गही **भुवाल**[२०]।

भुवाला—कालनेमि अरु उग्रसेन-कुल, उपज्यौ कंस **भुवाला**[२१]।

भूप—दृढ़ बिस्वास कियौ सिंहासन, तापर बैठे **भूप**[२२]।

---

३. सा० ६-१३६। ४. सा० १-१४१।
५. सा० २८४७। ६. सा० १-१४१।
७. सा० ३३२४। ८. सा० १-४०।
९. सा० १५०८। १०. सा० ४२६७।
११. सा० ६-१०५। १२. सा० ३३-१३।
१३. सा० ६-६७।
१४. सा० २४६१। १५. सा० १-१४१।
१६. सा० १-१४१। १७. सा० ४१८३।
१८. सा० ४१८३। १९. सा० ४१८५।
२०. सा० ६-१०४। २१. सा० १०-४।

भूपति—सूने किए भवन भूपति के, सुबस किए सुरलोक[२३] ।
भूपाल—कह्यौ न जाइ उताल जहाँ भूपाल तिहारौ[२४] ।
राइ—बरष चतुरदस भवन न बसिहैं आज्ञा दीन्हौं राइ[२५] ।
राजा—हरि, हौं सब पतितन कौ राजा[२६] ।
रानौ—जाति, गोत, कुल, नाम, गनत नहिं, रंक होइ कै रानौं[२७] ।
परजा—गुरु बसिष्ठ अरु मिलि सुमंत सौं, परजा-हेतु बिचारे[२८] ।
प्रजा—सेवा मातु, प्रजा-प्रतिपालत, यह जुग-जुग चलि आयौ[२९] ।
पहरुआ—लोक-बेद प्रतिहार, पहरुआ, तिनहूँ पैं राख्यौ न परयौ री[३०] ।
पाटरानी—अब कहावति पाटरानी, बड़े राजा स्याम[३१] ।
पायक—पायक मन, बानैत अधीरज, सदा दुष्ट-मति दूत[३२] ।
पौरिया—सकल खग मृग पैक पायक, पौरिया, प्रतिहार[३३] ।
प्रतिहार—कामादिक पाँचौ प्रतिहार । रहैं सदा ठाढ़े दरबार[३४] ।
बंदी—बिपिन सेना साजि नव-दल, बदत बंदी कीर[३५] ।
बनैत—बरन-बरन बादर बनैत अरु दामिनि कर करवार[३६] ।
बानैत—पायक मन, बानैत अधीरज, सदा दुष्ट-मति दूत[३७] ।
मंत्री—मंत्री गयौ फिरावन रथ लै, रघुबर फेरि दियौ[३८] ।
मोदी—मोदी लोभ, खवास मोह के, द्वारपाल अहँकार[३९] ।
रखवारे—प्रगट कपाट बिकट दीन्हें हे, बहु जोधा रखवारे[४३] ।
रथी—कुंजर कूल गिरात रथी रथ, स्रोनित सलिल गंभीर[४१] ।
सारथी—आपने बान सौं काटि ध्वज रुक्म कौ, अस्त्र अरु सारथी तुरत मारे[४२] ।

२२.	सा० १-४० ।	२३.	सा० ४१६२ ।
२४.	सा० १६१८ ।	२५.	सा० ६-४४ ।
२६.	सा० १-१४४ ।	२७.	सा० १-११ ।
२८.	सा० ६-५४ ।	२९.	सा० ६-५५ ।
३०.	सा० १८७२ ।	३१.	सा० ३१५० ।
३२.	सा० १-१४४ ।	३३.	सा० ३२२७ ।
३४.	सा० ४-१२ ।	३५.	सा० ३७६८ ।
३६.	सा० ४१६२	३७.	सा० १-१४१ ।
३८.	सा० ६-४६ ।	३९.	सा० १-१४१ ।
४०.	सा० ६-१०५ ।	४१.	सा० ४१६२ ।

सूत—बाजि मनोरथ, गर्व मत्त गज, असत-कुमत रथ **सूत**[४३]।

सुलतान—और हैं आज काल के राजा, मैं तिनमैं **सुलतान**[४४]।

सूरदास के समकालीन भौगोलिक, पारिवारिक, सामाजिक और राजनीतिक वातावरण-परिचायक उक्त शब्दों को, सूर-काव्य में इनके प्रयोग की दृष्टि से, स्थूल रूप से दो वर्गों में रखा जा सकता है। प्रथम वर्ग में भौगोलिक, पारिवारिक और सामाजिक वातावरण संबंधी वे शब्द आते हैं जो सूर-काव्य में सर्वत्र बिखरे मिलते हैं। द्वितीय वर्ग में केवल राजनीतिक वातावरण का परिचय देनेवाले शब्द आते हैं जो 'सूरसागर' के उन पदों में ही मिलते हैं जिनमें वर्ण्य विषय की स्पष्टता के लिए सांग रूपकों का आश्रय लिया गया है और जिनकी संख्या बहुत ही कम है। पारिवारिक संबंध और सामाजिक वर्ग यों तो ग्राम और नगर, दोनों में समान रूप से होते हैं; परंतु सूरदास ने इनमें से अधिकांश की चर्चा श्रीकृष्ण की गोकुल-वृंदावन-लीला के साथ ही की है। यही कारण है कि पारिवारिक संबंधों के लिए तत्सम शब्दों का व्यवहार कम किया गया है और सामाजिक वर्गों में भी धनियों, महाजनों, व्यवसायियों आदि की चर्चा सूर-काव्य में नहीं की गयी है। तात्पर्य यह है कि उक्त सूचियों से तत्कालीन ग्राम्य वातावरण का तो मुख्य रूप से और नागरिक वातावरण का गौण रूप से ही परिचय मिलता है।

---

४२. सा० ४१८३। ४३. सा० १-१४१।
४४. सा० १-१४५।

'सूरसागर' में खानपान-वर्णन

सूर-काव्य में जिन जिन विषयों की सूचियाँ मिलती हैं, उनमें सबसे लंबी सूची भोज्य पदार्थों की है। इसके दो प्रमुख कारण जान पड़ते हैं। मुख्य तो यह है कि छप्पन प्रकार के भोजन तैयार करना जब हमारे यहाँ सामान्य मुहावरा रहा है, तब परम आराध्य के भोग के लिए, अपनी विनीत तथा श्रद्धामयी कृतज्ञता प्रकट करते हुए जो पदार्थ उपस्थित किये जाते हैं, उनकी संख्या का पर्याप्त बढ़ जाना नितांत स्वाभाविक ही माना जायगा। पुष्टिमार्गीय 'सेवा' में भोज्य वस्तुओं की संख्या को बहुत अधिक महत्व दिये जाने के मूल में भी संभवतः उक्त मनोवृत्ति ही है।

दूसरा कारण यह है कि प्रति दिन चार बार भगवान् का भोग लगता है और प्रति बार सब नहीं तो कुछ नये व्यंजन अवश्य तैयार किये जाते हैं। इसी प्रकार रोज-रोज के व्यंजनों में स्वाद और पौष्टिकता, दोनों दृष्टियों से, कुछ न कुछ नवीनता रखनी ही पड़ती है। तीज-त्योहारों और उत्सवों के अवसर पर तो यह संख्या और भी बढ़ जाती है।

सूरदास ने चार समय के भोजनों की चर्चा अपने काव्य में की है— कलेऊ, दोपहर का भोजन, छाक और सायंकाल का भोजन या 'बियारी'। कलेऊ से तात्पर्य प्रातःकालीन भोजन से है और 'छाक' दोपहर या तीसरे पहर उन ग्वाल-बालों के लिए भेजी जाती है, जो वन में गाय चराने के लिए जाते हैं। 'छाक' में कौन कौन पदार्थ रहते हैं, इनकी चर्चा सूर-काव्य में विस्तार से नहीं मिलती; शेष तीनों अवसरों से संबंधित व्यंजनों की सूचियाँ सूरदास ने बड़े मनोवेग से प्रस्तुत की हैं। दही, माखन, मेवा, पकवान, मिठाइयाँ आदि पदार्थ तो प्रायः प्रत्येक समय के भोजन में मिलते हैं, परंतु तरकारियाँ और फल कलेऊ में अधिक नहीं रहते, दोपहर और सायंकाल के भोजनों में इनकी भरमार रहती है।

(अ) कलेऊ—सूरदास ने कलेऊ का वर्णन यों तो कई पदों में किया है, परंतु उसके लिए प्रस्तुत भोज्य पदार्थों का पूर्ण ज्ञान केवल चार पदों से हो सकता है। पहले पद में जिन पदार्थों की चर्चा है, वे हैं—अँदरसे, खजूरी, खिरलाड़ू (लौंग लगे), खुरमा, गालमसूरी गूझा (पूर भरे), घृत-पूरी, घेवर- (घिरत चभोरे), जलेबी, दधि, दधिबरा, दूध (अधावट), दूधबरा, पचकौरी, प्यौसर (सोंठ-मिरिच की), मधु, माखन, मालपुआ, मिठाई (खोवामय), मिसिरी, मोतीलाड़ू, लाड़ू, सक्करपारे, साढ़ी, सीरा, सेव और हेसमि—

जोइ - जोइ भावै मेरे प्यारे। सोइ - सोइ तोहि देहुँ लला रे।
है करयौ सिरावन सीरा। कछु हठ न करहु बलबीरा।
सद दधि - माखन यौं आनी। तापर मधु मिसिरी सानी।
खोवामय मधुर मिठाई। सो देखत अति रुचि पाई।
कछु बलदाऊ कौ दीजै। अरु दूध अधावट पीजै।
सब हेरि धरी है साढ़ी। लई ऊपर - ऊपर काढ़ी।
अति प्योसर सरस बनाई। तिहिं सोंठि मिरचि रुचिनाई।
दधि दूध बरा दहिरौरी। सो खात अमृत पचकौरी।
सुठि सरस जलेबी बोरी। जिहिं जेंवत रुचि नहिं थोरी।
अरु खुरमा सरस सँवारे। ते परसि धरे हैं न्यारे।
सक्करपारे सद - पागे। ते जेंवत परम सभागे।
सेव लाड़ू रुचिर सँवारे। जे मुख मेलत सुकुमारे।
सुठि मोती लाड़ू मीठे। वे खात न कबहूँ उबीठे।
खिर - लाड़ू लवंगनि नाए। ते करि बहु जतन बनाए।
गूझा बहु पूरन पूरे। भरि - भरि कपूर रस चूरे।
अरु तैसियै गाल मसूरी। जो खातहिं मुख - दुख दूरी।
अरु हेसमि सरस सँवारी। अति स्वाद परम सुखकारी।
बाबर बरने नहिं जाई। जिहिं देखत अति सुख पाई।
मृदु मालपुआ मधु साने। जे तुरत तपत करि आने।
सुन्दर अति सरस अँदरसे। ते घृत - दधि - मधु मिलि सरसे।
घेवर अति घिरत - चभोरे। लै खाँड़ सरस रस बोरे।

मधुरी अति सरस खजूरी। सद परसि धरी घृत - पूरी।
जब पूरी सुनि हरि हरष्यौ। तब भोजन पर मन करष्यौ[४५]।

दूसरे पद में कुछ व्यंजन तो ऊपर दिये हुए ही हैं, नये ये हैं—आम, ऊख-रस, केरा, खारिक, खीरा, खुबानी, खोपरा, खोवा, चिउरा, चिरौंजी, दाख, पिराख, फेनी, श्रीफल, सफरी और सुहारी—

उठिए स्याम, कलेऊ कीजै। मनमोहन - मुख निरखत जीजै।
खारिक, दाख, खोपरा, खीरा। केरा, आम, ऊख-रस, सीरा।
श्रीफल मधुर, चिरौंजी आनी। सफरी चिउरा, अरुन खुबानी।
घेवर फेनी और सुहारी। खोवा सहित खाहु, बलिहारी।
रचि पिराक लाडू दधि आनौं। तुमकौं भावत पुरी सँधानौं।
तब तमोल रचि तुमहिं खवावौं। सूरदास पनवारौ पावौं[४६]।

तीसरे पद में उक्त व्यंजनों में से कुछ के अतिरिक्त 'षटरस के मिष्टान्न' और ये पदार्थ हैं—किसमिस, गरी, छुहारे, तरबूजा, पिस्ता, बादाम और रोटी—

कमल-नैन हरि करौ कलेवा।
माखन रोटी, सद्य जम्यो दधि, भाँति-भाँति के मेवा।
खारिक, दाख, चिरौंजी, किसमिस, उज्वल गरी बदाम।
सफरी, सेब, छुहारे, पिस्ता, जे तरबूजा नाम।
अरु मेवा बहु भाँति-भाँति हैं षटरस के मिष्टान्न।
सूरदास प्रभु करत कलेवा, रीझे स्याम सुजान[४७]।

चौथे पद में केवल खाझा और मठरी—दो ही नये पदार्थ हैं। कलेऊ के अंत में तमोल या बीरी भी खिलायी गयी है—

पिस्ता दाख बदाम छुहारा खुरमा खाझा गूँझा मठरी[४८]।
× × × ×
तब तमोल रचि तुमहिं खवावौं। सूरदास पनवारौ पावौं[४९]।
× × × ×

---

४५. सा० १०-१८३। ४६. सा० १०-२११।
४७. सा० १०-२१२। ४८. सा० ८१०।
४९. सा० १०-२११।

तब बारी तनक मुख नायो। अति लाल अधर ह्वै आयौ[५०]।

(आ) दोपहर का भोजन—सूरदास ने दोपहर के भोजन में जो पदार्थ गिनाये हैं, उनमें से मुख्य ये हैं—अगस्त की फरी, अँचार, अँदरसा, अदरख, इँडहर, इमली की खटाई, उभकौरी, ककरी, ककोरा, कचनार, कचरी, कचोर, कचौरी, कढ़ी (खाटी), करवँदा, करील के फूल, करेला, कुनरू, केला, खाँड़ की खीर, खीचरी, खीरा, खोवा, गालमसूरी (मेवा और कपूर पड़ा), गोफा, घेवर, चने का साग, चिचींडा, चौराई, छाँछ, छुँगारी, जलेबी, टेटी, ढरहरी (मूँग की, हींग पड़ी), तोरई, दही (मलाईदार), निबुआ, निमोना, पकौरी, परवर, पाकर की कली, पानौरा, पापर, पूरी, पेठा, फाँगफरी, फेनी (मिस्री-दूध में मिली), बथुआ, बरा (खट्टे, खारे, मीठे), बरी, बेसन-सालन, भाँटा-भरता (खटाई पड़ा), भात (पसाया हुआ, रामभोग भात), माखन (तुलसी पड़ा), मालपुआ, मुँगछी, रतालू, राइता, राम तोरई, रोटी (अजवाइन और सेंधा नमक पड़ी बेसन की रोटी), लाड़ू, लापसी, लुचई, सरसों (साग), सहिजना के फूल, सिखरन, सींगरी, सुहारी, सूरन, सेम, सेव, सोवा आदि। अंत में 'पीरे पान पुराने बीरा' दिये जाते हैं—

भोजन भयौ भावते मोहन। तातोइ जेंइ जाहु गो-दोहन।
खीर, खाँड, खीचरी सँवारी। मधुर महेरी गोपनि प्यारी।
राइ भोग लियो भात पसाई। मूँग ढरहरी हींग लगाई।
सद माखन तुलसी दै तायौ। घिरत सुबास कचोरा नायौ।
पापर बरी अँचार परम सुचि। अदरख अरु निबुअनि ह्वैहै रुचि।
सूरन करि तरि सरस तोरई। सेम सींगरी छौंकि झोरई।
भरता भँटा खटाई दीनी। भाजी भली भाँति दस कीन्ही।
साग चना मरुसा चौराई। सोवा अरु सरसों सरसाई।
बथुआ भली भाँति रचि राँध्यौ। हींग लगाइ राइ दधि साँध्यौ।
पोई पावर फाँग फरी चुनि। टेटी टेंढ़स छोलि कियौ पुनि।
कुनरू और ककोरा कौरे। कचरी चारु चिचींड़ा सौरे।
भले बनाइ करेला कीने। लौन लगाइ तुरत तरि लीने।

---

५०. सा० १०-१८३।

फूले फूल सहिजना छौंके । मन रुचि होइ नाज के औंके ।
फूल करील कली पाकर नम । फरी अगस्त करी अमृत सम ।
अरुइहिं इमली दई खटाई । जेंवत षटरस जात लजाई ।
पेंठा बहुत प्रकारन कीन्हे । तिन सौं सबै स्वाद हरि लीन्हें ।
खीरा रामतरोई तामैं । अरुचिनि रुचि अंकुर जिय जामै ।
सुन्दर रूप रतालू रातौ । तरि करि लीन्हौ अबहीं तातौ ।
ककरी कचरी अरु कचनारयौ । सरस निमोननि स्वाद सँवारयौ ।
कितिक भाँति केला करि लीने । दै करवँदा हरदि - रँग भीने ।
बरी बरिल अरु बरा बहुत बिधि । खारे खट्टे अरु मीठे हैं निधि ।
पानौरा राइता पकौरी । उभकौरी मुँगछी सुठि सौरी ।
अंमृत इंडहर है रस सागर । बेसन सालन अधिकौ नागर ।
खाटी कढ़ी बिचित्र बनाई । बहुत बार जेंवत रुचि आई ।
रोटी रुचिर कनक बेसन करि । अजवाइनि सैंधौ मिलाइ धरि ।
अबहीं अँगाकरि तुरत बनाई । जे भजि भजि ग्वालनि सँग खाईं ।
माँडे माँड़ि तुनेरे चुपरे । बहु घृत पाइ आपहीं उपरे ।
पूरी पूरि कचौरी कौरी । सदल सउज्जल सुन्दर सौरी ।
लुचुई ललित लापसी सोहै । स्वाद सुबास सहज मन मोहै ।
मालपुआ माखन मथि कीन्हें । प्राइ प्रसित रबि सम रँग लीन्हे ।
लावन लाडू लागत नीके । सेव सुहारी घेवर घी के ।
गोभा गूँधे गाल मसूरी । मेवा मिलै कपूरनि पूरी ।
ससि सम सुन्दर सरस अँदरसे । ऊपर कनी अमी जनु बरसे ।
बहुत जलेब जलेबी बोरी । नाहिंन घटत सुधा तैं थोरी ।
देखत हरष होत है सभी । मनहु बुदबुदा उपजै अभी ।
फेनी घुरि मिसि मिली दूध सँग । मिस्री मिस्रित भई एक रँग ।
साज्यौ दही अधिक सुखदाई । ता ऊपर पुनि मधुर मलाई ।
खोवा खाँड औटि है राख्यौ । सोहै मधुर मीठे रस चाख्यौ ।
बासौंधी सिखरन अति सौंधी । मिले मिरिच मेटत चकचौंधी ।
छाँछ छबीली धरी धुँगारी । भर है उठति झार की न्यारी ।
इतने ब्यँजन जसोदा कीन्हें । तब मोहन बालक सँग लीन्हें ।

बैठे आइ हँसत दोउ भैया। प्रेम - मुदित परसति है मैया।
थार कटोरा जरित रतन के। भरि सब सालन बिबिध जतन के।
पहिलैं पनवारौ परसायौ। तब आपुन कर कौर उठायौ।
जेंवत रुचि अधिकौ अधिकैया। भोजन हू बिसरति नहिं गैया।
सीतल जल कपूर रस रचयौ। सो मोहन अति रुचि करि अँचयौ।
महरि मुदित नित लाड़ लड़ावै। ते सुख कहाँ देवकी पावै।
धरि तष्टी भारी जल ल्याई। भर्‍यो चुरू खरिका लै आई।
धरि पान पुराने बीरा। खात भई दुति दाँतनि हीरा[५१]।

(इ) बियारी—रात्रि के भोजन के लिए सूरदार ने 'बियारी' शब्द का प्रयोग किया है। 'सूरसागर' के एक पद में 'बियारी' में निम्नलिखित व्यंजन गिनाये गये हैं—अँदरसा, अमिरती, इलाचीपाक, उरद की दाल, कढ़ी, काचरी, कूरबरी, केरा, कौरी, खरबूजा (छिला हुआ), खरिक, खाँड़ की खीर, खाजा, खूआ, गरी, गिंदौरी, गुभा, गुड़बरा, (कोरे और भिजे), गोंदपाक, घेवर, चने की भाजी और दाल, चिचिंडा, चिरौरी, चौराई. जलेबी, भोरी, तिनगरी, दाख, दूध, निमोना (बहुत मिरचदार), पतबरा, पनौ (पना), पापर, पालक, पिंड, पिंडारू, पिंडीक, पिठौरी पूआ (घी चभोरे), पेठापाक, पोई (नीबू निचुड़ी), पौर, फुलौरी, फेनी, बथुआ, बदाम, बनकौरा, बरी, बाटी, बेसन-दोने (बेसन के बने अनेक पदार्थ), बेसन-पुरी, भात (घृत सुगंधि में पसाया नीलावती चाँवर), भिंडी, मसूर की दाल, मिथौरि, मूँग की दाल, मूँग पकौरा, मूरा (उज्जवल, चरपरे और मीठे), मेथी, रोटी, लापसी, लाल्हा, लावनि-लाडू, लुचुई, लोनिका, सरसों, सीरा, सेव और सोवा। इनके अतिरिक्त 'हींग हरद मिरच' के साथ तेल में छौंके, तथा अदरख, आँवरे और आँब पड़े हुए कपूर से सुवासित अनेक सालन। अंत में कपूर-कस्तूरी से सुवासित पान—

नंद-भवन मैं कान्ह अरोगैं। जसुदा ल्यावैं षटरस भोगैं॥
आसन दै, चौकी आगैं धरि। जमुना-जल राख्यौ भारी भरि।
कंचन-थार मैं हाथ धुवाए। सत्रह सौ भोजन तहँ आए।
लै-लै धरति सबनि के आगैं। मातु परोसै जो हरि माँगैं।

---

५१. सा० १२१३।

खार, खाँड, घृत लावनि लाडू। ऐसे होहिं न अमृत खाँडू।
और लेहु कछु सुख ब्रज-राजा। लुचुई, लपसी, घेवर, खाजा।
पेठापाक, जलेबी, कौरी। गोंदपाक, तिनगरी, गिंदौरी।
गुझा, इलाचीपाक, अमिरती। सीरा साजौ लेहु ब्रजपती।
छोलि धरे खरबूजा, केरा। सीतल बास करत अति घेरा।
खरिक, दाख अरु गरी, चिरौरी। पिंड बदाम लेहु बनवारी।
बेसन-पुरी, सुख-पूरी लीजै। आछौ दूध कमल-मुख पीजै।
मैया मोहिं और क्यों प्यावै। धौरी को पय मोहिं अति भावै।
बेला भरि हलधर कौं दीन्हौ। पीवत पय अस्तुति बल कीन्हौ।
ग्वाल सखा सबहीं पय अँचयौ। नीकें औटि जसोदा रचयौ।
दोना मेलि धरे हैं चूआ। हौंस होइ तौ ल्याऊँ पूआ।
मीठे अति कोमल हैं नीके। ताते तुरत चभोरे घी के।
फेनी, सेव अँदरसे प्यारे। लै आवौ जेंवौ मेरे बारे।
हलधर कहत ल्याउ री मैया। मोकौं दे नहिं लेत कन्हैया।
जसुमति दुग्ध भरी लै परसति। जेंवत हैं अपनी रुचि सौं अति।
कान्ह माँगि सीतल जल लीयौ। भोजन बीच नीर लै पीयौ।
भात पसाइ रोहिनी ल्याई। घृत सुगंधि तुरतै दै ताई।
नीलावती चाँवर दिव-दुर्लभ। भात परोस्यौ माता सुरलभ।
मूँग, मसूर, उरद, चनदारी। कनक-फटक धरि फटकि पछारी।
रोटी, बाटी, पोरी, झोरी। इक कोरी इक घीव चभोरी।
गायौ-घृत भरि धरी कटोरी। कछु खायौ कछु फेटैं छोरी।
मीठैं तेल चना की भाजी। एक सकुनी दै मोहिं साजी।
मीठे चरपर उज्ज्वल कूरा। हौंस होइ तौ ल्याऊँ भूरा।
मूँग-पकौरा पनौ पतबरा। इक कोरे इक भिजे गुरवरा।
पापर बरी मिथौरि फुलौरी। कूर, बरी काचरी पिठौरी।
बहुत मिरच दै किए निमोना। बेसन के दस बीसक दोना।
बन कौरा पिंडीक चिचिंडी। सीप पिंडारू कोमल भिंडी।
चौराई लाल्हा अरु पोई। मध्य मेलि निबुआनि निचोई।
रुचिर लजालु लोनिका फाँगी। कढ़ी कृपालु दूसरैं माँगी।

सरसौं, मेथी, सोवा पालक। बथुआ रौंधि लियौ जु उतालक।
हींग, हरद मिर्च, छौंके तेले। अदरख और आँवरे मेले।
सालन सकल कपूर सुबासत। स्वाद लेत सुंदर हरि ग्रासत।
आँब आदि दै सबै सँधाने। सब चाखे गोबर्धन-राने।
कान्ह कह्यौ हौं मातु अघानौ। अब मोकौं सीतल जल आनौ।
अँचवन लै तब धोए कर मुख। सेष न बरनै भोजन कौ सुख।
उज्ज्वल पान, कपूर, कस्तुरी। आरोगत की मुख की छबि रूरी।
चंदन अंग सखनि कैं रच्यौ। जसुमति के सुख कौ नहिं परच्यौ।
जूठनि माँगि सूर जनि लीन्हौ। बाँटि प्रसाद सबनि कौं दीन्हौ।
जन्म-जन्म बाढ़्यौ जूठनि कौ। चेरौ नंद महर के धन कौ[५२] ॥

'बियारी' का वर्णन 'सूरसागर' के दो-तीन पदों में और मिलता है। उनमें से एक में खजूरी, गालमसूरी, दूधबरा, मोतिलाड़ू आदि तथा दूसरे में अथानौ करौंदा, मैदा की पूरी, सूरन आदि नये व्यंजन दिये गये हैं—

कमल-नैन हरि करौ बियारी।
लुचुई लपसी, सद्य जलेबी, सोइ जेंवहु जो लगै पियारी।
घेवर, मालपुआ, मोतिलाड़ू, सधर मजूरी सरस सँवारी।
दूध बरा, उत्तम दधि बाटी, गाल मसूरी की रुचि न्यारी।
आछौ दूध औटि धौरी कौ, लै आई रोहिनि महतारी।
सूरदास बलराम स्याम दोउ जेंवहु जननि जाइ बलिहारी[५३]।

\+ + +

चलौ लाल कछु करौ बियारी।
रुचि नाहीं काहू पर मेरी, तू कहि, भोजन करौं कहा री!
बेसन मिलै सरस मैदा सौं, अति कोमल पूरी है भारी।
जेंवहु स्याम मोहि सुख दीजै, तातैं करी तुम्हें ये प्यारी।
निबुआ, सूरन, आम, अथानो और करौंदनि की रुचि न्यारी
बार बार यौं कहति जसोदा, कहि ल्यावै रोहिनि महतारी।

---

५२. सा० ३९६। ५३. सा० १०-२२७।

जननी सुनत तुरत लै आई, तनक तनक धरि कंचन थारी।
सूर स्याम कछु कछु लै आयो, अरु अँचयो जल बदन पखारी।[५४]

कलेऊ, दोपहर का भोजन और 'बियारी' के लिए प्रस्तुत किये जानेवाले उक्त व्यंजनों के अतिरिक्त सूर-काव्य में कुछ और भोज्य पदार्थों की भी चर्चा यत्र-तत्र की गयी है; जैसे—अन्न, कदुआ या कुम्हड़ा, गोरस, ज्वारि, चिउरा, तंदुल, तिल, दधिओदन, धान, मूरी, मोदक, लहसुन, सातू-साग।

अन्न—रोहिनी करति अन्न भोजन तक[५५]।

कदुआ—कदुआ करत मिठाई घृत पक, रोहिनि करति अन्न भोजन तक[५६]।

कुम्हँड़े—सूरदास तीनौ नहिं उपजत, धनिया, धान, कुम्हौंड़े[५७]।

गोरस—मेरे सिर की नई बहनियाँ, लै गोरस मैं सानी[५८]।

ज्वारि—सूरदास मुक्ताहल भोगी हंस ज्वारि क्यौं चुनिहै[५९]।

चिउरा—श्रीफल मधुर चिरौंजी आनी! सफरी चिउरा अरुन खुबानी[६०]।

तंदुल—सूर सुमति तंदुल चाबत ही कर पकर्‌यौ कमला भई धीर[६१]।

तिल—सूरदास तिल-तेल-सवादी, स्वाद कहा जानै घृत ही री[६२]।

दधि-ओदन—दधि-ओदन दोना भरि दैहौं, अरु भाइनि मैं थपिहौं[६३]।

धान—सूरदास तीनौ नहिं उपजत, धनिया, धान कुम्हौंड़े[६४]।

मूरी—मूरी के पातनि के बदलैं को मुक्ताहल देहै[६५]।

मोदक—मोदक मौझ कपूर ग्वालि मद माती हो[६६]।

लहसुन—जैसे काग हंस की संगति, लहसुन संग कपूर[६७]।

सातू साग—भक्त के बस भक्त बत्सल, बिदुर सातू साग खायौ[६८]।

---

५४. सा० १०-२१४।
५५. सा० ८६२।
५६. सा० ८६२।
५७. सा० ३६०४।
५८. सा० १०-३३७।
५९. सा० ३५२६।
६०. सा० १०-२११।
६१. सा० ४२२८।
६२. सा० १६२४।
६३. सा० ६-६४।
६४. सा० ३६०४।
६५. सा० ३६६४।
६६. सा० २८६२।
६७. सा० ३१५२।
६८. सा० ४१८०।

यह तो हुआ मनुष्यों का भोजन। राक्षसों के भोजन की चर्चा सूरदास ने नहीं की है। बानरों के, हनुमान के भोजन की चर्चा एक स्थान पर अवश्य है। अशोक-बाटिका में वे 'अगनित तरु फल सुगंध मृदुल मिष्ट खाटे' से तृप्त होते हैं—

अगनित तरु-फल सुगन्ध-मृदुल-मिष्ट-खाटे।
मनसा करि प्रभुहिं अर्पि, भोजन करि डाटे[६९]।

भोजन के लिए प्रयुक्त होनेवाले मसालों में अजवाइन, खटाई, मिरच, सेंधा (नमक), हरद, हींग आदि की चर्चा ऊपर की जा चुकी है। धनियाँ, राई और लोन की चर्चा स्वतंत्र पदों में मिलती है—

धनिया—सूरदास तीनो नहिं उपजत, धनिया, धान, कुम्हड़ि[७०]।
राई—जसुमति माय धाय उर लीन्हों राई-लोन उतारो[७१]।
लोन—सूरदास प्रभु हमहि निदरि, दाढ़े पर लोन लगावै[७२]।

'सूरसागर' में मसालों की एक लंबी सूची दी गयी है जो वाणिज्य की वस्तुओं के अंतर्गत आगे दी जायगी।

पेय पदार्थों में जल या नीर और दूध तो सभी प्राणियों के लिए सामान्य रूप से आवश्यक होते हैं। स्त्री-पुरुष विशेष अवसरों पर, यथा होली में, बारुनी का उपयोग करते हैं, परंतु निशाचर सदा मद-पान करते हैं—

जल, नीर—कान्ह माँगि सीतल जल लीयौ। भोजन बीच नीर लै पीयौ[७३]।
मद पान—नाना रूप निसाचर अद्भुत, सदा करत मद पान[७४]।

---

६९. सा० ९-९६। ७०. सा० ३६०४।
७१. सा० ४५७। ७२. सा० ३६३९।
७३. सा० ३९६। ७४. सा० ९-७५।

व्यवहार की सामान्य वस्तुएँ

दैनिक जीवन में उपयोगी व्यवहार की जिन सामान्य वस्तुओं की चर्चा सूर-काव्य में की गयी है, स्थूल रूप से उनको ग्यारह वर्गों में विभाजित किया जा सकता है— वस्त्र, आभूषण, सामान्य व्यक्ति के उपयोग की वस्तुएँ, शासक वर्ग के उपयोग की वस्तुएँ, पात्र, धातु, रत्न, रंग, सुगंधित पदार्थ, वाहन और अस्त्र-शस्त्र।

वस्त्र—सूरदास ने बच्चों, स्त्रियों और पुरुषों के लिए जो वस्त्र गिनाये हैं, उनकी संख्या अधिक नहीं है। बच्चों के लिए काछनी, झगा या झगुली, पिछौरी, बगा आदि; पुरुषों के लिए, कामरि, कामरिया या कामरी, धोती, और पितांबर; और स्त्रियों के लिए अँगिया (=कंचुकि, कंचुकी, चोली), अँतरौटा, चूनरि, चूनरी या चूनी, निचोल, निलांबर, लहँगा---दच्छिनचीर तिपाई कौ लहँगा—(पँचरंग) सारि या सारी, सूथन आदि वस्त्रों का सूरदास ने विशेष रूप से उल्लेख किया है; जैसे—

काछनी—लकुटी, मुकुट, पीत उपरैना, लाल काछनी काछें[७५]।

झगुलि—प्रफुलित ह्वै कै आनि, दीनी है जसोदा रानी, झीनियै झगुलि तामैं कंचन-तगा[७६]।

पिछौरी—कटि-तट पीत पिछौरी बाँधे, काक पच्छ धरे सीस[७७]।

बगा—नाचै फूल्यौ अँगनाइ, सूर बकसिस पाइ, माथे पै चढ़ाइ लीनौ लाल कौ बगा[७८]।

कामरि—सूरदास कारी कामरि पर चढ़त न दूजौ रंग[७९]।

कामरिया—कान्ह काँधे कामरिया कारी, लकुट लिए कर घेरै हो[८०]।

---

७५. सा० २८२६।
७६. सा० १०-३६।
७७. सा० ६-२०।
७८. सा० १०-३६।
७९. सा० १-३३२।
८०. सा० ४५२।

कामरी—डासन काँस, **कामरी** ओढ़न, बैठन गोप-सभाहीं[८१]।

पितंबर—हा हा करते पाइनि परते, लेहु पितंबर माँगि[८२]।

पीतांबर—इक पट पीतांबर गहि झटक्यो, इक मुरली लई कर मोरी[८३]।

अँगिया—अँगिया नील, माँड़नी राती, निरखत नैन चुराइ[८४]।

कंचुकि—मटुकी लई उतारि, मोरि भुज कंचुकि कारी[८५]।

कंचुकी—गोरें गात मनोहर उरजनि, लसति कंचुकी भीनी[८६]।

चोली—बीरा-हार-चीर-चोली-छबि, को कवि कहै निवारि[८७]।

अँतरौटा—अँतरौटा अवलोकि कै, असुर महा मद माते (हो)[८८]।

चूनरि—पहिरे चीर सुरंग सारी, चुह चुह चूनरि बहु रंगनी[८९]।

चुनरी—नीलांबर, पाटंबर, सारी, सेत पीत चुनरी, अरुनाए[९०]।

चूनी—हरित चूनी, जटित नग सब, लाल हीरा लाइ[९१]।

निचोल—पुरइनि कपिस निचोल, बिबिध अँग, बहु रति रुचि उपजावै[९२]।

नीलांबर—नीलांबर पहिरे तनु भामिनि, जनु घन दमकति दामिनि[९३]।

लँहगा—पगनि जेहरि, लाल लँहगा, अंग पँच-रँग सारि[९४]।

दच्छिन चीर तिपाइ कौ लँहगा—दच्छिन चीर तिपाइ कौ लँहगा। पहिरि विविध पट मोलनि मँहगा[९५]।

सारि—पगन जेहरि, लाल लँहगा, अंग पँच-रँग सारि[९६]।

सारी—उर अंतर उघटत न जानि, सारी सुरँग सुही[९७]।

सूथन—सूथन जँघन बाँधि नारा बँद, तिरनी पर छबि भारी[९८]।

उपरना या उपरैना नामक वस्त्र का उल्लेख स्त्री और पुरुष, दोनों के साथ सूरदास ने किया है; जैसे—

---

८१. सा० २८२६। ८२. सा० २८७७।
८३. सा० २८७२। ८४. सा० १०५३।
८५. सा० १६१८। ८६. सा० २८२६।
८७. सा० २०२६। ८८. सा० १-४४।
८९. सा० २८३२। ९०. सा० ७८४।
९१. सा० २८३१। ९२. सा० १०४६।
९३. सा० १०५५। ९४. सा० १०४३।
९५. सा० २६०१। ९६. सा० १०४३।
९७. सा० १०-२४। ९८. सा० १०५४।

१. (गोपाल) तुम्हारी माया महा प्रबल, जिहिं सब जग बस कीन्हौं (हौ) ।

+ + +

पहिरे राती चूनरी, सेत उपरना सोहै हो[९९] ।

२. लियौ उपरना छीनि, दूरि डारनि अँटकायौ[१] ।

३. लकुटी, मुकुट, पीत उपरैना लाल काछनी काछैं[२] ।

इनमें से प्रथम उदाहरण में 'माया,' दूसरे में 'गोपी' और तीसरे में श्रीकृष्ण को 'उपरना' या 'उपरैना' ओढ़े कहा गया है। अंतर यह है कि अंतिम में उसके साथ 'पीत' विशेषण है जो पीतांबर की याद दिलाता है।

ऊपर जिन वस्त्रों का उल्लेख हुआ है, वे ग्राम और नगर के प्रायः सभी बच्चों, पुरुषों और स्त्रियों के लिए हैं। विशेष स्थिति में बनबासी राम 'बलकल बसन' पहने और 'दृढ़ फेंट' बाँधे हैं—

राम धनुष अरु सायक साँधे।

सिय-हित मृग पाछैं उठि धाए, बलकल बसन, फेंट दृढ़ बाँधे[३] ।

इसी प्रकार जोगियों के 'कंथा पहरने' का उल्लेख भी 'सूरसागर' के अनेक पदों में हुआ है।

पहनने की अन्य वस्तुओं में, पैरों में पनही या पाँवरि, तथा सर पर पगिया और मुकुट का उल्लेख सूरदास ने किया है—

पनहियाँ—खेलत फिरत कनक मय आँगन, पहिरे लाल पनहियाँ[४] ।

पाँवरि—सूर स्याम की पाँवरि सिर धरि, भरत चले बिलखाइ[५] ।

पगिया—सिर पगिया, बीरा मुख सोहै, सरस रसीले बोल[६] ।

मुकुट—लकुटी, मुकुट, पति उपरैना, लाल काछनी काछैं[७] ।

आ. आभूषण—सूर-काव्य में जिन आभूषणों की चर्चा की गयी है, उनमें मुख्य ये हैं—अंगद (केयूर या बाजूबंद), अँगूठी (= मुंदरी, मुद्रा, मुद्रिका), कंकन, कंठश्री या कंठसिरी, करन-फूल, किंकिनी, कुंडल, खुंठिला, खुभि या खुभी,

---

९९. सा० १-४४ । १. सा० १६१८ ।
२. सा० २८३६ । ३. सा० ९-५८ ।
४. सा० ९-१९ । ५. सा० ९-५३ ।
६. सा० [illegible] । ७. सा० [illegible] ।

गजदंती, गजमोतिनिहार, घुँघरू या नूपुर, चुरो या चूरो, चूरा या चूरौ, चौकी, छुद्रघंटिका (छुद्रावलि, मेखला) जेहरि, झूमका, टाड़, (जराड़ कौ) टौकौ, तरिवन या तरौन, ताटंक, तिरनी, तौकी, दुलरी, नकबेसरि, नथ, नौसरिहार, पदिक, पहुँचिया या पहुँची, पैजनी, बलय, बहुँटा, बिछिया, बेसरि, माला, मानिकहार, मुक्तामाल, मोतिनिलर, मोतीहार, सीसफूल, हमेल, हारावलि आदि।

अंगद—उर पर कुसुम बनमाला अंगद खरे बिराजैं[८]।

केयूर—दुलरी ग्रीव माल मोतिन की, लै केयूर भुज स्याम निहारति[९]।

बाजूबंद—बहुँटा, कर-कंकन, बाजूबंद, एते पर है तौंकी[१०]।

अँगूठी—तब कर काढ़ि अँगूठी दीन्हीं, जिहिं जिय उपज्यो धीर[११]।

मुँदरी—**मुँदरी** दूत धरी लै आगैं तव प्रतीति जिय आई[१२]।

मुद्रा—कहाँ वे राम, कहाँ वे लछिमन, क्यौं करि मुद्रा पायौ[१३]।

मुद्रिका—कर पल्लवनि **मुद्रिका** सोहति, ता छबि पर मन लाजति[१४]।

कंकन—किंकिनी कटि, कनित **कंकन**, कर चुरी झनकार[१५]।

कंठश्री—**कंठश्री** दुलरी बिराजति, चिबुक स्यामल बिंदु[१६]।

कंठसिरी—**कंठसिरी** गजमोतिनि हार। चंचरि चुहि किंकिन झनकार[१७]।

करनफूल—मोतिनि माल जराइ कौ टीकौ, **करनफूल** नकबेसरि[१८]।

किंकिनी—**किंकिनी** कलित कटि हाटक रतन जटित[१९]।

कुंडल—मनि **कुंडल** ताटंक बिलोल। बिहँसत लज्जित ललित कपोल[२०]।

कुठिला—नकबेसरि **खुठिला**, तरिबन कौ गर हमेल, कुच जुग उतंग कौ[२१]।

खुभि—छिटकि रही स्रम बूँद बदन पर, अरु पाइनि **खुभि**-चूरौ[२२]।

खुभी—ससि मुख तिलक दियौ मृगमद कौ, **खुभी** जराइ जरी है[२३]।

---

८. सा० ४५१। ९. सा० ५१२।
१०. सा० १५४०। ११. सा० ९-८६।
१२. सा० ९-८७। १३. सा० ९-८८।
१४. सा० १०५३। १५. सा० १०४३।
१६. सा० १०४३। १७. सा० ११८०।
१८. सा० १५४०। १९. सा० १०-१५१।
२०. सा० ११८०। २१. सा० १४७५।
२२. सा० २८२६। २३. सा० १०५५।

गजदंती—कर कंकन चूरा गजदंती। नख मेटत मनि-मानिक-कंती[२४]।
गजमोतिनि हार—कंठसिरी गजमोतिनि हार। चंचरि चुहि किंकिन झनकार[२५]।
घुँघुरु—चलत कटि कुनित किंकिन, घूँघुरु झनकार[२६]।
नूपुर—कनक-किंकनी-नूपुर-कलरव, कूजत बाल मराल[२७]।
चुरी—किंकिनी कटि, कनित कंकन, कर चुरी झनकार[२८]।
चूरा—कर कंकन चूरा गजदन्ती। नख मेटत मनि-मानिक-कंती[२९]।
चौकी—हृदय चौकी चमकि बैठी, सुभग मोतिनहार[३०]।
छुद्रघंटिका—छुद्रघंटिका पग नूपर जेहरि, बिछिया सब लेखौ[३१]।
छुद्रावली—छुद्रावली उतरति कटि तैं सैंति धरति मनही मन वारति[३२]।
मेखला—कटि पट पीत, मेखला मुखरित, पाइनि नूपुर सोहै[३३]।
जेहरि—पगनि जेहरि, लाल लहँगा, अंग पँच रँग सारि[३४]।
झूमका—चंचल चलत झूमका, अंचल अद्भुत है रूप[३५]।
टाड़—कर कंगन ते भुज टाड़ भई[३६]।
टीकौ—मोतिनि माल जराइ कौ टीकौ, करनफूल नकबेसरि[३७]।
तरिवन—लोचन आँजि, स्रवन तरिवन-छबि, को कवि कहै निवारि[३८]।
तरौन—सुभ स्रवननि तरल तरौन, बेनी सिथिल गुही[३९]।
ताटंक—स्रवन वर ताटंक की छबि, गौर ललित कपोल[४०]।
तिरनी—स्रवननि पहिने उलटे तार। तिरनी पर चौकी शृंगार[४१]।
तौकी—बहुँटा, कर कंकन, बाजूबंद, एते पर है तौकी[४२]।
दुलरी—दुलरी ग्रीव माल मोतिनि की, लै केयूर भुज स्याम निहारति[४३]।

२४.	सा० २६०१।	२५.	सा० ११८०।
२६.	सा० १०५६।	२७.	सा० १०५५।
२८.	सा० १०४३।	२९.	सा० २६०१।
३०.	सा० १०४३।	३१.	सा० १५४०।
३२.	सा० ५२१।	३३.	सा० ४५१।
३४.	सा० १०४३।	३५.	सा० १०५७।
३६.	सा० ४०६०	३७.	सा० १५४०।
३८.	सा० २०२७।	३९.	सा० १०-२४।
४०.	सा० १०४३।	४१.	सा० ११८०।
४२.	सा० १५४०।	४३.	सा० ५१२।

नकबेसरि—भाल तिलक, काजर चख, नासा **नकबेसरि** नथ फूली[४४]।

नथ—भाल तिलक, काजर चख, नासा नकबेसरि **नथ** फूली[४५]।

हार इक नौसरि—कंठसिरी, दुलरी तिलरी तर और **हार इक नौसरि**[४६]।

पदिक—उर पर **पदिक** कुसुम बनमाला, अंगद खरे बिराजैं[४७]।

पहुँचिया—चित्रित बाँह **पहुँचिया** पहुँचै, हाथ मुरलिया छाजै[४८]।

पहुँची—वै निरखति पिय-उर-भुज की छबि, पहुँचनि **पहुँची** भ्राजति[४९]।

पैजनी—झुनुक झुनुक बोलै **पैजनी** मृदु मुखर[५०]।

वलय—बहु नग जरे जराऊ अँगिया, भुजा बहूँटनि, **वलय** संग कौ[५१]।

बहुँटा—**बहुँटा** कर-कंकन, बाजूबंद, एते पर है तौकौ[५२]।

बिछिया—कंकन-चुरी, किंकिनी, नूपुर, पैजनि, **बिछिया** सोहति[५३]।

बेसरि—सुभग **बेसरि** ललित नासा, रीझि रहे नँद नंद[५४]।

माला—कुच बिगलित **माला** गिरी[५५]।

मानिक-मोती—कंठसिरी, दुलरी, तिलरी-उर **मानिक-मोती**-हार रंग कौ[५६]।

मुक्तामाल—**मुक्तामाल**, बाल-बग-पंगति, करत कुलाहल कूल[५७]।

मोतिनिलर—दसन दमक, **मोतिनिलर**-ग्रीवा, सोभा कहत न आवे[५८]।

मोती-हार—कंठसिरी, दुलरी तिलरी-उर मानिक **मोती-हार** रंग कौ[५९]।

सीसफूल—श्री **सीसफूल**, अमोल तरिवन, तिलक सुन्दर भाल[६०]।

हमेल—नकबेसरि खुठिला, तरिवन कौ, गर **हमेल**, कुच जुग उतंग कौ[६१]।

इन आभूषणों में से अधिकांश स्त्रियों के हैं। बच्चों के लिए किंकिनी, कुंडल, घुँघुरू, छुद्रघंटिका, (छुद्रावलि या मेखला), पहूँची, पैजनी, मुक्तामाल,

---

४४. सा० ३८१५।	४५. सा० ३८१५।
४६. सा० १५४०।	४७. सा० ४५१।
४८. सा० ४५१।	४९. सा० १०५३।
५०. सा० १०-१५१।	५१. सा० १४७५।
५२. सा० १५४०।	५३. सा० १०५८।
५४. सा० १०४३।	५५. सा० ११८०।
५६. सा० १४७५।	५७. सा० १०४९।
५८. सा० ४५१।	५९. सा० १४७५।
६०. सा० २८४१।	६१. सा० १४७५।

आदि के अतिरिक्त कठुला और बघनहा भी बताये गये हैं। पुरुषों के आभूषणों में अंगद या केयूर, कुंडल, मुद्रिका, मुक्तामाल या मोतीहार मुख्य हैं।

कठुला—उर बघनहाँ, कंठ कठुला, झँडूले बार[६२]।

बघनहाँ—उर बघनहाँ, कंठ कठुला, झँडूले बार[६३]।

३ सामान्य व्यक्ति के उपयोग की वस्तुएँ—

ईंधन, ऊखल, ऐपन, कापरा, किवारा, कुंजी, झोरी या झोली, तारौ, तूल, दर्पन, दीप या दीपक, दोना, दोहनि, पटरी, पतिया या पाती, पनवारे, परदा, पलंग या प्रजंक, पलिका, पालनौ, पावड़े, पीढ़ा, पूतरी, पोत, प्रतिमा, बहनिया, मथानी, रेसम, लकुटि, लकुटिया, सन, सींक, सूत, सूतरी, सेज, हिंडोरना आदि।

ईंधन—ब्रज करि अबाँ जोग करि ईंधन, सुरति आगि सुलगाए[६४]।

ऊखल—जननी ऊखल बाँधती, हमहीं देती छोरि[६५]।

ऐपन—ऐपन की सी पूतरी (सब), सखियन कियौ सिंगार[६६]।

कापरा—काढ़ौ कोरे कापरा (अरु), काढ़ौ घी के मौन[६७]।

किवारा—लंक गढ़ माँहि आकास मारग गयौ चहूँ दिसि बज्र लागे किवारा[६८]।

कुँजी—धर्म धीर, कुल कानि कुँजी करि, तिहि तारौ दै, दुरी धरयो री[६९]।

झोरी—लाल गुलाल समूह उड़ावत, फेंट कसे अबीर झोरी की[७०]।

तारौ—धर्म धीर, कुलकानि कुञ्जी करि, तिहिं तारौ दै दुरी धरयौ री[७१]।

तूल—तेल तूल-पावक पुट धरिकै, लै लंगूर बँधाए[७२]।

दरपन—पति अरु प्रिया प्रगट प्रतिबिंबित, ज्यौं दरपन मैं झाईं[७३]।

दीप—दीप सौं दीप जैसैं उजारी। तैसैं ही ब्रह्म घर घर बिहारी[७४]।

दीपक—दीपक प्रेम क्रोध मारुत छिनु, परसत जनि बुझि जाई[७५]।

---

६२. सा० १०-१५१।	६३. सा० १०-१५१।
६४. सा० ३७८१।	६५. सा० ४०६५।
६६. सा० १०-४०।	६७. सा० १०-४०।
६८. सा० ६-७६।	६९. सा० १८७२।
७०. सा० २८७२।	७१. सा० १८७२।
७२. सा० ६-६८।	७३. सा० २८२६।
७४. सा० २४६५।	७५. सा० २८२६।

दोना—दधि-ओदन-दोना भरि देहौं, अरु भाइनि मैं थपिहौं[७६]।

दोहनि—धेनु दुहन चले धाइ, रोहिनी लई बुलाइ, दोहनि मोहिं दे मँगाई, तबहीं लै आई[७७]।

पतरी—कै अब डारि दई मन बच क्रम, पतरी ज्यौंहि जुठौंही[७८]।

पतिया—इतनी बिनती सुनहु हमारी; बारक हूँ पतिया लिखि दीजै[७९]।

पाती—लोचन-जल कागद-मसि मिलिकै ह्वै गई स्याम स्याम की पाती[८०]।

पनवारे—महर गोप सबहीं मिलि बैठे, पनवारे परसाए[८१]।

परदा—सुनहु सूर हमसौं कह परदा, हम करि दीन्ही सौंट सई[८२]।

पलँग—टूटी छानि, मेघ जल बरसैं, टूटौ पलँग बिछैइये[८३]।

प्रजंक—पुहुप-प्रजंक परी नवजोबनि सुख-परिमल-संजोग[८४]।

पलिका—आए लाल उनींदे आपुन, पलिका पौढ़ौ पलोटिहौं पाइ[८५]।

पालनौ—पालनौ अति सुंदर गढ़ि ल्याउ रे बढ़ैया[८६]।

पाँवड़े—बरन-बरन पट परत पाँवड़े, बीथिन सकल सुगंध सिंचाई[८७]।

पीढ़ा—आवत पीढ़ा बैठन दीनौ, कुसल बूझि अति निकट बुलाई[८८]।

पूतरी—ऐपन की सी पूतरी (सब), सखियनि कियौ सिंगार[८९]।

पोत—सूरदास कहुँ सुनी न देखी, पोत सूतरी पोहत[९०]।

प्रतिमनि—करि करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा कमल बैठकी साजति[९१]।

बहनियाँ—मेरे सिर की नई बहनियाँ, लै गोरस मैं सानी[९२]।

मथानी—कोउ मट्ठकी कोउ माट भरी नवनीत मथानी[९३]।

रेसम—पँच रँग रेसम लगाउ, हीरा मोतिन मढ़ाउ[९४]।

---

७६. सा० ६-१६४।
७७. सा० ६१६।
७८. सा० ३४६५।
७९. सा० ३१६०।
८०. सा० ३४८७।
८१. सा० १०-८६।
८२. सा० १७२८।
८३. सा० १-२३६।
८४. सा० ६-७५।
८५. सा० २६४६।
८६. सा० १०-४१।
८७. सा० ६-१६६।
८८. सा० १०-५०।
८९. सा० १०-४०।
९०. सा० ३६६०।
९१. सा० १०-११०।
९२. सा० १०-३३७।
९३. सा० १६१८।
९४. सा० १०-४१।

लकुट—हा हा लकुट त्रास दिखरावति, आँगन पास बँधायौ[९५]।

लकुटिया—इत लिए कनक- लकुटिया नागरि, उत जेरी धरे ग्वाल[९६]।

सन—सन अरु सूत, चीर-पाटंबर, लै लंगूर बँधाए[९७]।

सींक—द्वार सथिया देत स्यामा, सात सींक बनाइ[९८]।

सूत—सन और सूत, चीर पाटंबर, लै लंगूर बँधाए[९९]।

सूतरी—सूरदास कहुँ सुनी न देखी, पोत सूतरी पोहत[१]।

सेज—सुमन सुगंध सेज है डासी, देखत अंग बिहाल[२]।

हिंडोरना—अब गढ़नहार हिंडोरना कौ, ताहि लेहु बुलाइ[३]।

ई शासकों के उपयोग की वस्तुएँ—

छत्र, चमर या चँवर, चमू या फौज, दरबार, धुजा, पताक, बैरख, सिंहासन आदि।

छत्र—तिहूँ लोक परताप, छत्र सिंघासन सोहै[४]।

चमर—उग्रसेन-सिर छत्र, चमर अपनैं कर ढारौं[५]।

चँवर—कुंभ कुंजर बिटप भारी, चँवर चारु मर्हर[६]।

चमू—चहुँ दिसि चाँदनि, निसा-चमू चलि, मनौ धवल घन-धूरि उड़ानी[७]।

फौज—समय बसंत बिपिन रथ, हय, गय, मदन-सुभट-नृप फौज पलानी[८]।

दरबार—राग रंग रँगि मँगि रह्यौ नंदराइ-दरबार[९]।

धुजा—टूटत धुजा-पताक-छत्र-रथ, चाप-चक्र-सिरत्रान[१०]।

पताक—टूटत धुजा पताक छत्र रथ चाप-चक्र सिरत्रान[११]।

---

९५. सा० ३५६। ९६. सा० २८६५।
९७. सा० ९-९८। ९८. सा० १०-२४।
९९. सा० ९-९८। १. सा० ३६९०।
२. सा० २६५०। ३. सा० २८३०।
४. सा० ९-१६०। ५. सा० १६१८।
६. सा० ३७६८। ७. सा० २७८५।
८. सा० २७८५। ९. सा० २९०४।
१०. सा० ९-१६०। ११. सा० ९-१०९।

बैरख—मनु बैरख फहराइ ग्वालि मदमाती हो[12] ।

सिंहासन—दृढ़ विस्वास कियौ सिंहासन,, तापर बैठे भूप[13] ।

उ पात्र—

कटोरा, कटोरी, कमोर, कमोरी, कलस, कूंडी, कोपर, गागरि, घट, झारी, थार, थालिका, माट, मटकी आदि ।

कटोरा—जो कच कनक कटोरा भरि-भरि, मेलत तेल फुलेल[14] ।

कटोरी—गायौ-घृत भरि धरी कटोरी, कछु खायौ कछु पेटैं छोरी[15] ।

कमोर—सौंधैं भरयो कमोर, लाल रँग होरी[16] ।

कमोरी—राखी रही दुराइ कमोरी, सो लै प्रगट दिखायौ[17] ।

कलस—मनु मधु-कलस स्यामताई की, स्याम छाप सी दीनी[18] ।

कुंडी—पूँगी-फल-जुत जल निरमल धरि, आनी भरि कुंडी जो कनक की[19] ।

कोपर—दधि-फल-दूब कनक-कोपर भरि साजत सौंज विचित्र बनाई[20] ।

गागरि—एक लिए सिर सौंधे गागरि । फेंट अबीर भरे बहु नागरि[21] ।

घट—बिधि कुलाल कीन्हें काँचे घट, ते तुम आनि पकाए[22] ।

झारी—झारी कैं जल बदन पखारौ, सुख करि सारँगपानी[23] ।

थार—दीन्हौ हार गरैं, कर कंकन, मोतिनि थार भरे[24] ।

थालिका—झलमल दीप समीप सौंज भरि लेकर कंचन थालिका[25] ।

माट—सिर दधि-माखन के माट, गावत गीत नए[26] ।

मटुकी—कोउ मटुकी कोउ माट भरी नवनीत मथानी[27] ।

---

१२. सा० २८६२ ।
१३. सा० १-४० ।
१४. सा० ३८१५ ।
१५. स० ३६६ ।
१६. सा० २८६६ ।
१७. सा० १५४८ ।
१८. सा० २८२६ ।
१९. सा० ६-२५ ।
२०. सा० ६-१६६ ।
२१. सा० २८६२ ।
२२. सा० ३७८१ ।
२३. सा० १०-२०८ ।
२४. सा० १०-१७ ।
२५. सा० ८०६ ।
२६. सा० १०-२४ ।
२७. सा० १६१८ ।

(उ) धातु और खनिज पदार्थ—

कंचन (=कनक, सोना, हाटक), काँच, गेरू, ताँबा, पारा, (सिंदूर या सेंदूर), रूपा आदि।

कंचन—कंचन कलस, होम, द्विज-पूजा, चंदन भवन लिपायौ[२८]।

कनक—कनक रतन-मनि पालनौ, गढ़्यौ काम सुतहार[२९]।

सोने—ताँबे, रूपे सोने सजि, राखीं वे बनाइ कै[३०]।

हाटक—किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि, मृदुकर-कमलनि पहुँची रुचिर वर[३१]।

काँच—काँच पोत गिरि जाइ नंद-घर गयौ न पूजै[३२]।

गेरू—जैसे कंचन काँच बराबरि, गेरू काम सिंदूर[३३]।

ताँबे—ताँबे रूपे सोने सजि राखीं वै बनाइ कै[३४]।

पारहिं—जैसे हाटक लै रसाइनीं, पारहिं आगि दई[३५]।

सिंदूर—जैसे कंचन काँच बराबरि, गेरू काम सिंदूर[३६]।

सेंदुर—कहुँ जावक कहुँ बने तँबोल रँग, कहुँ अँग सेंदुर दाग्यौ[३७]।

रूपे—ताँबे रूपे सोने सजि राखीं वै बनाइ कै[३८]।

(ऊ) रत्न—

नीलम, पन्ना, पिरोजा, प्रवाल या विद्रुम, फटिक या स्फटिक, बज्र या हीरा, मनि, मरकत, मानिक, मुक्ता या मोती, लाल आदि—

नीलम—मोतिनि, झालरि झुमका राजत, बिच नीलम बहुभावनौ[३९]।

पन्ना—पन्ना पिरोजा लगे बिच-बिच चहूँ दिसि लटकत मनी[४०]।

पिरोजा—रेशम बनाइ नव रतन पालनौ, लटकन बहुत पिरोजा - लाल[४१]।

२८.	सा० १०-४।	२९.	सा० १०-४२।
३०.	सा० ३०६२।	३१.	सा० १०-१५१।
३२.	सा० १६१८।	३३.	सा० ३१५२।
३४.	सा० ३०६२।	३५.	सा० ३२६६।
३६.	सा० ३१५२।	३७.	सा० २५१६।
३८.	सा० ३०६२।	३९.	सा० २८३२।
४०.	सा० ४१८६।	४१.	सा० १०-८४।

प्रवाल—कंचन खंभ, मयारि, मरुवा-डाँड़ी, खचि हीरा बिच लाल-प्रवाल[४२] ।

बिद्रुम—पटुकी बिच-बिच बिद्रुम लागे, हीरा लाल खचावनौ[४३] ।

फटिक—लाल डाँड़ी फटिक पटुली, मनिनि मरुवा धौर[४४] ।

स्फटिक—स्फटिक सिंहासन मध्य बिराजत, हाटक सहित सजावनौ[४५] ।

बज्र—बज्र की लौं लगीं सुठि, सुभग सोभाकारि[४६] ।

हीरा—पँच रँग रेसम लगाउ, हीरा मोतिनि मढ़ाउ[४७] ।

मनि—कनक-रतन-मनि पालनौ, गढ़्यौ काम सुतहार[४८] ।

मरकत—डाँड़ी खची पचि पचि मरकत मय सुपाँति सुढार[४९] ।

मानिक—मरुवे सौं मानिक-चुनी लागी, बीच हरि तरंग[५०] ।

मुक्ता—सुबरन लंक-कलस-आभूषन, मनि-मुक्ता-गन हार[५१] ।

मोतिन—मोतिन झालरि नाना भाँति खिलौना, रचे बिस्वकर्मा सुतहार[५२] ।

लाल—रेसम बनाइ नव रतन पालनौ, लटकन बहुत पिरोजा-लाल[५३] ।

(ए) रंग—

अरुन, (राता या राती, लाल, लोहित), उज्ज्वल या गौर, कुसुंभो, धवल (=सित, सेत, स्वेत), नील, हरी आदि ।

अरुन—अधर अरुन-छबि बज्र दंत दुति, ससि गुन रूप समावनौ[५४] ।

राती—राती पीरी आँगिया पहिरे, नव तन झूमक सारी[५५] ।

लाल—लाल सारी, नील लहँगा, स्वेत आँगिया अंग[५६] ।

लोहित—अति लोहित दृग रँगमँगे, रँग भीने हो[५७] ।

---

४२. सा० १०-८४ । ४३. सा० २८३२ ।
४४. सा० २८३५ । ४५. सा० २८३२ ।
४६. सा० २८४१ । ४७. सा० १०-४१ ।
४८. सा० १०-४२ । ४९. सा० २८४१ ।
५०. सा० २८३३ । ५१. सा० ६-१२४ ।
५२. सा० १०-८४ । ५३. सा० १०-८४ ।
५४. सा० २८३२ । ५५. सा० २८७३ ।
५६. सा० २८३१ । ५७. सा० २८६३ ।

उज्ज्वल—उज्ज्वल रंग गोपिका नारी। स्याम रंग गिरिवर के धारी[५८]।

गौर—गौर स्याम मिलि नील-पीत छबि, घन दामिनि संचारनौ[५९]।

कुसुँभी—नान्ही नान्ही बूँदनि बरषन लाग्यौ, भीजत कुसुंभी अंबर[६०]।

धवल—चहूँ दिसा चाँदनी, चमू चलि मनहुँ धवल सोइ धूरि उड़ानी[६१]।

सित—पहिरे बसन अनेक-बरन तन, नील अरुन सित, पीत[६२]।

सेत—नीलांबर, पाटंबर, सारी, सेत पीत चुनरी अरुनाए[६३]।

स्वेत—लाल सारी नील लहँगा, स्वेत अँगिया अंग[६४]।

नील—लाल सारी नील लहँगा, स्वेत अँगिया अंग[६५]।

पियरी—पियरी पिछौरी झीनी, और उपमा न भीनी, बालक दामिनि मानौ ओढ़े बारौ बारि-धर[६६]।

पीत—गौर स्याम मिलि नील-पीत छबि, घन दामिनि संचारनौ[६७]।

पीरी—राती पीरी अँगिया पहिरे, नव तन झूमक सारी[६८]।

स्याम—गौर स्याम मिलि नील-पीत छबि, घन दामिनि संचारनौ[६९]।

स्यामल—गौर स्यामल अंग मिलि दोउ, भए एकहिं भाँति[७०]।

हरित—कुसुम-रंग गुरुजन पितु माता। हरित रंग भगनी अरु भ्राता[७१]।

हरी-हरी—तैसिहि हरी-हरी भूमि सुहावनि मोर-सुख नहिं थोरेनो[७२]।

(ऐ) सुगंधित पदार्थ—

अरगज या अरगजा, कपूर, कस्तूरी या मृगमद, कुमकुम, केसर, चंदन, चोवा, फुलेल आदि—

अरगजा—सौंधैं अरगजा अरु मरगजी सारी अंग, कहूँ दरकी कुचनि पर अँगिया नवेलि[७३]।

---

५८. सा० १६१२। ५९. सा० २८२२।
६०. सा० १६६१। ६१. सा० २८४६।
६२. सा० २८६६। ६३. सा० ७८४।
६४. सा० २८३१। ६५. सा० २८३१।
६६. सा० १०-१५१। ६७. सा० २८३२।
६८. सा० २८७३। ६९. सा० २८३२।
७०. सा० २८३३। ७१. सा० १६१२।
७२. सा० २८३२। ७३. सा० २०१०।

कपूर—जैसें काग हंस की संगति, लहसुन संग कपूर[७४]।

मृगमद—खौरि केसर अति बिराजत तिलक मृगमद कौ दियौ[७५]।

कुमकुम—केलि करत काहू जुबती, कर कुमकुम भरि उर दीन्हौ[७६]।

केसर—हरद दूब केसर मग छिरकहु, भेरि मृदंग निसान बजावहु[७७]।

चंदन—आठ मास चंदन पियौ (हो), नवएँ पियौ कपूर[७८]।

चोवा—चोवा चंदन अबिर कुमकुमा, छिरकत भरि पिचकारी[७९]।

फुलेल—जे कच कनक कटोरा भरि-भरि, मेलत तेल फुलेल[८०]।

इन सभी पदार्थों का उल्लेख प्रायः शृंगार-सज्जा के प्रसंग में हुआ है। इनके अतिरिक्त जावक, महाउर या महावर का उल्लेख भी हुआ है, यद्यपि विशिष्ट सुगंधित पदार्थों में उसकी गिनती नहीं है—

जावक—पाग लटपटी सोहई, जावक-रँग लाये[८१]।

महावर—नारा बंदन सूथन जंघन। पाइन नूपुर बाजत संघन॥ नखनि महावर खुलि रह्यौ[८२]।

(ओ) वाहन—

जहाज, नाव या नौका, विमान, रथ या स्यंदन आदि।

जहाज—बुधि बल बचन जहाज बाँह गहि, बिरह-सिंधु अवगाहु[८३]।

नाव—राम-प्रताप, सत्य सीता कौ, यहै नाव-कनधार[८४]।

नौका—नाहिं चितवन देत सुत-तिय, नाम-नौका ओर[८५]।

बिमाननि—अंबर बिमाननि सुमन बरषत, हरषि सुर सँग नारि[८६]।

रथ—मंत्री गयौ फिरावन रथ लै रघुबर फेरि दियौ[८७]।

स्यंदन—स्यंदन खंडि महारथि खंडौं, कपिध्वज सहित गिराऊँ[८८]।

---

७४. सा० ३१५२। ७५. सा० ४१८६।
७६. सा० २६४७। ७७. सा० ४१८५।
७८. सा० १०-४०। ७९. सा० २८५४।
८०. सा० ३८१५। ८१. सा० २५२२।
८२. सा० ११८०। ८३. सा० ३८१८।
८४. सा० ९-८९। ८५. सा० १-९९।
८६. सा० २८३०। ८७. सा० ९-४६।
८८. सा० १-२७०।

(औ) अस्त्र-शस्त्र—

असि (=करवार, खड्ग), (लोहजटित) आगर, कमान (=कोदंड, चाप, धनु, धनुष, पिनाक, सरासन), कवच या सनाह, कुंत या नेजा, गदा, गोला, चक्र, छुरी, तूनीर या निषंग, दारू, दियऽबान, पनच, पलीता, बज्र, बरछी, बान, तीर, (=सर, सायक), ब्रह्मफाँस, ब्रह्मबान, मुसल, सक्ति, साँग, सिरस्त्रान, सूल, हल आदि।

असि—नैन-कटाच्छ बान, असि बर नख, बरषि सिराने बोऊ[८९]।

करबार—साल्व करवार लै स्याम के देखतैं, डारि दियौ सीस ताकौ उतारी[९०]।

खड्ग—तृष्ना देसऽरु सुभट मनोरथ, इंद्री खड्ग हमारी[९१]।

आगर—आगर इक लोह जटित, लीन्ही बरिबंड[९२]।

कमान—जलद कमान बारि दारू भरि, तड़ित पलीता देत[९३]।

कोदंड—तोरि कोदंड मारि सब जोधा, तब बल भुजा निहार्‌यौ[९४]।

चाप—टूटत धुजा-पताक-छत्र-रथ, चाप-चक्र सिरत्रान[९५]।

धनु—कटि तट-पट पीतांबर काछे, धारे धनु-तूनीर[९६]।

धनुष—राम धनुष अरु सायक साँधे[९७]।

पिनाक—जिन रघुनाथ पिनाक पिता-गृह तोर्‌यौ निमिष महीं[९८]।

सरासन—कुसुम-सरासन-बान बिराजत, मनहुँ मान-गढ़ अनु अनु भानी[९९]।

कवच—कर धरे धनुष कटि कसि निषंग। मनु बने सुभट सजि कवच अंग[१]।

सनाह—मारू मार करत भट दादुर, पहिरे बिबिध सनाह[२]।

कुंत—ठौर ठौर अभ्यास महाबल करत कुंत-असि-बान[३]।

नेजा—नख नेजा-आकृति उर लागैं नेकु न मानत पीर[४]।

---

८९. सा० २८२६।	९०. सा० ४२२१।
९१. सा० १-१४४।	९२. सा० ९-९६।
९३. सा० ४२६७।	९४. सा० ३०४९।
९५. सा० ९-१५८।	९६. सा० ९-४४।
९७. सा० ९-५८।	९८. सा० ९-९१।
९९. सा० २८४६।	१. सा० २८४७।
२. सा० ३३१३।	३. सा० ९-७५।
४. सा० १९८६।	

गदा—साल्व परधान द्युमान मारी **गदा**, प्रद्युम्न मूरछित सुधि बिसारी[५]।

गोला—गरजन अरु तड़पन मनु **गोला**, पहरक मैं गढ़ लेत[६]।

चक्र—टूटत धुजा-पताक-छत्र-रथ, चाप-**चक्र**-सिरत्रान[७]।

छुरी—प्रीति करि दीन्हीं गरैं **छुरी**[८]।

तूनीर—कटि तट पट पीतांबर काछे, धारे धनु-**तूनीर**[९]।

निषंग—कर धरे धनुष कटि कसि **निषंग**। मनु बने सुभट सजि कवच अंग[१०]।

दारू—जलद कमान बारि **दारू** भरि, तड़ित पलीता देत[११]।

दिव्यबान—देख्यौ जब, **दिव्यबान** निसिचर कर तान्यौ[१२]।

पलीता—जलद कमान बारि दारू भरि, तड़ित **पलीता** देत[१३]।

बज्र—रुंड भकरुंड झुकि परे धर धरनि पर, गिरत ज्यौं बेग करि **बज्र** मारे[१४]।

बान—अपने **बान** सौं काटि ध्वज रुक्म कौ, अस्व औ सारथी तुरत मारे[१५]।

सायक—धर अंबर, दिसि-बिदिसि, बढ़े अति **सायक** किरन समान[१६]।

ब्रह्मफाँस—**ब्रह्मफाँस** उन लई हाथ करि, मैं चितयौ कर जोरि[१७]।

ब्रह्मबान—**ब्रह्मबान** कानि करी, बल करि नहिं बाँध्यौ[१८]।

मुगदर—आपुन ही **मुगदर** लै धायौ, करि लोचन बिकराल[१९]।

मुसल—राम हल **मुसल** सँभारि धायौ बहुरि, पेलि कै रथ सुभट बहु सँहारे[२०]।

सक्ति—उड़त धूरि धुरवा दसहूँ दिसि, सूल **सक्ति** जलधार[२१]।

साँग—**साँग** की झलक चहुँ दिसा चपला चमक, गज गरज सुनत दिग्गज डराये[२२]।

सिरत्रान—टूटत धुजा-पताक-छत्र-रथ, चाप-चक्र-**सिरत्रान**[२३]।

---

५. सा० ४२२१। ६. सा० ४२६७।
७. सा० ९-१५८। ८. सा० ३१८५।
९. सा० ९-४४। १०. सा० २८४७।
११. सा० ४२६७। १२. सा० ९-९६।
१३. सा० ४२६७। १४. सा० ४१८३।
१५. सा० ४१८३। १६. सा० ९-१५८।
१७. सा० ९-१०४। १८. सा० ९-९७।
१९. सा० ९-१०४। २०. सा० ४१८३।
२१. सा० ४१६२। २२. सा० ४१८३।
२३. सा० ९-१५८।

सूल—उड़त धूरि धुरवा दसहूँ दिसि, सूल सक्ति जलधार[२४]।

हल—राम हल मुसल सँभारि धायौ बहुरि, पेलि कै रथ सुभट बहु सँहारे[२५]।

(अ) खेल और व्यायाम—

सूरदास के अनुसार कृष्ण और उनके सखा सबसे पहले 'दौड़' का खेल खेलते हैं। 'तारी' देकर सब सखा भागते हैं और श्याम उन्हें छूने को दौड़ते हैं—

खेलत स्याम ग्वालनि संग।
सुबल हलधर अरु श्रीदामा, करत नाना रंग।
हाथ तारी देत भाजत, सबै करि करि होड़।
बरजि हलधर, स्याम, तुम जनि चोटि लागै गोड़।
तब कह्यौ मैं दौरि जानत, बहुत बल मो गात।
मेरी जोरी है श्रीदामा, हाथ मारे जात।
उठे बोलि तबै श्रीदामा, जाहु तारी मारि।
आगैं हरि पाछैं श्रीदामा, धर्‌यौ स्याम हँकारि।
जानि कै मैं रह्यौ ठाढ़ौ, छुवत कहा जु मोहिं।
सूर हरि खीझत सखा सौं, मनहिं कीन्हौ कोह[२६]।

कभी-कभी वे 'आँखमुदाई' खेलते हैं—

बोलि लेहु हलधर भैया कौं।
मेरे आगैं खेल करौ कछु, सुख दीजै मैया कौं।
मैं मूँदौं हरि आँखि तुम्हारी, बालक रहैं लुकाई।
हरषि स्याम तब सखा बुलाए खेलन आँखि मुँदाई।
हलधर कह्यौ, आँखि को मूँदै, हरि कह्यौ, मातु जसोदा।
सूर स्याम लए जननि खिलावति, हरषि सहित मन मोदा[२७]।

श्रीकृष्ण की आँख मूँद कर माता यशोदा उसके कान में बलराम के छिपने का स्थान बता देती हैं; परंतु श्रीकृष्ण अपनी होड़ श्रीदामा से मानकर दौड़कर उसी को पकड़ लेते हैं और उसे 'चोर' बना देते हैं।

---

२४. सा० ४१६२। २५. सा० ४१८३।
२६. सा० १०-२१३। २७. सा० १०-२३६।

हरि तब अपनी आँखि मुँदाई ।
सखा सहित बलराम छुपाने, जहँ तहँ गए भगाई ।
कान लागि कह्यौ जननि जसोदा, वा घर मैं बलराम ।
बलदाऊ कौं आवन देहौं, श्रीदामा सौं काम ।
दौरि दौरि बालक सब आवत, छुअत महरि की गात ।
सब आए रहे सुबल श्रीदामा, हारे अबकैं तात ।
सोर पारि हरि सुबलहिं धाए, गह्यौ श्रीदामा जाइ ।
दै-दै सौंहैं नंद बबा की, जननी पै लै आइ ।
हँसि-हँसि तारी देत सखा सब, भए श्रीदामा चोर ।
सूरदास हँसि कहति जसोमति, जीत्यौ है सुत मोर[२८] ।

गैया चराने जाने पर मैदान में उन्हें गेंद खेलने की इच्छा होती है और तब श्रीदामा जाकर गेंद ले आता है—

खेलन चले कुँवर कन्हाइ ।
कहत घोष निकास जैयै, तहाँ खेलैं धाइ ।
गेंद खेलत बहुत बनिहै, आनौ कोऊ जाइ ।
सखा श्रीदामा गए घर, गेंद तुरतहिं आइ ।
अपने कर लै स्याम देख्यौ, अतिहिं हरष बढ़ाइ ।
सूर के प्रभु सखा लीन्हें करत खेल बनाइ[२९] ।

गेंद खेलने का ढंग भी बिलकुल सीधा-सादा है । एक भागता है, दूसरा गेंद मारता है, तीसरा रोकता और फिर मारता है ; इसी तरह खेल चलता रहता है—

खेलत स्याम सखा लिए संग ।
इक मारत इक रोकत गेंदहिं इक भागत करि नाना रंग ।
मार परस्पर करत आपु मैं, अति आनंद भए मन माहिं ।
खेलत ही मैं स्याम सबनि कौ, जमुना-तट कौं लीन्हे जाहिं ।
मारि भजत जो जाहि, ताहि सो मारत, लेत आपुनौ दाउ ।
सूर स्याम के गुन को जानै कहत और कछु और उपाउ[३०] ।

---

२८. सा० १०-२४० । २९. सा० ५३२ ।
३०. सा० ५३३ ।

भौंरा-चक-डोरी से भी उनका पर्याप्त मनोरंजन होता है—

दै मैया भौंरा चक डोरी।
जाइ लेहु आरे पर राख्यौ, काल्हि मोल लै राखे कोरी।
लै आए हँसि स्याम तुरत हीं, देखि रहे रँग रँग बहु डोरी।
मैया बिना और को राखे, बार-बार हरि करत निहोरी।
बोलि लिए सब सखा संग के, खेलत कान्ह नंद की पोरी।
तैसेइ हरि, तैसेइ सब बालक, कर भौंरा-चकरिनि की जोरी।
देखति जननि जसोदा यह सुख, बार-बार बिहँसति मुख मोरी।
सूरदास प्रभु हँसि-हँसि खेलत, ब्रज-बनिता डारति तृन तोरी[३१]।

बच्चों को पतंग उड़ाने का भी शौक रहता है। सूरदास ने कृष्ण और उनके सखाओं से पतंग तो नहीं उड़वायी है, परंतु गुड़ी-डोर की चर्चा अवश्य की है जिससे स्पष्ट होता है कि उनके समय में मनोरंजन का यह भी एक साधन था—

संगहि संग फिरति निसि-बासर, नैंन निमेष न लावति।
बँधी दृष्टि ज्यौं गुड़ी डोर बस, पाछैं लागी धावति[३२]।

ये तो हुए श्रीकृष्ण के बाल्यकाल के खेल। युवावस्था में वे घोड़े पर चढ़कर चौगान खेलते हैं सभी खिलाड़ी उच्चैःश्रवा-जैसे घोड़ों पर सवार होकर आते हैं। दो दल बँटते हैं और कंदुक से खेल शुरू हो जाता है—

मनमोहन खेलत चौगान।
द्वारावती कोट कंचन मैं, रच्यौ रुचिर मैदान।
जादवबीर बटाइ बटाई, हरि बल इक इक ओर।
निकसे सबै कुँवर असवारी उच्चैस्रवा के पोर।
नीले सुरँग कुमैत स्याम तेहि, परदे सब मन रंग।
बरन अनेक भाँति भाँतिनि के, चमकत चपला ढंग।
झीन जराइ जु जगमगाइ रहि, देखत दृष्टि भ्रमाइ।
सुर, नर, मुनि कौतुक सब लागे, इक टक रहे लुभाइ।
जबहीं हरि लै गोइ कुदावत, कंदुक कर सौं लाइ।
तबहीं औचकहीं करि धावत, हलधर हरि के पाँइ।

---

३१. सा० ६६६। ३२. सा० १८५३।

कुँवर मवै घोड़े फेरे पै, छाँड़त नहिं गोपाल।
बलै अछुत छल-बल करि जीते, सूरदास प्रभु हाल[33]।

इनके अतिरिक्त हेलुआ या जलकेलि की गणना किशोरावस्था और युवावस्था के खेलों में की जा सकती है। सूरदास ने इसका वर्णन अनेक पदों में बड़े विस्तार से किया है। रास के उपरांत श्रीकृष्ण के साथ गोपियाँ जलक्रीड़ा करती हैं। किसी को जल का जरा भी भय नहीं है; उनके आनंद का पार नहीं है—

रैनि रस-रास-सुख करत बीती।
भोर भए गए पावन जमुन कैं सलिल, न्हात सुख करत अति बढ़ी प्रीती।
एक इक मिलति हँसि, इक हरि संग रमि, इक जल मध्य, इक तीर ठाढ़ी।
एक इक दुरति, इक अंक भरि कै चलति, एक सुख करति अति नेह बाढ़ी
काहु नहिं डरति, जल-थलहु क्रीड़ा करति, हरति मन निडर, ज्यौं कंत नारी
सूर प्रभु स्याम-स्यामा संग गोपिका, मिटी तनु-साध भई मगन भारी[34]।

ब्रज की गोपबालाएँ श्रीकृष्ण और सखियों के साथ परस्पर जल छिड़कती और आनंद मनाती हैं—

जमुना-जल क्रीड़त नँद-नंदन।
गोपी बृंद मनोहर चहुँ दिसि, मध्य अरिष्ट-निकंदन।
सोभित सलिल परस्पर छिरकत, सिथिल होत भुज-बंदन।
ज्यौं अहिपति केंचुरि कौं, लघु लघु छोरत हैं अंग-बंदन।
कच-भर कुटिल सुदेस अंबुकनि, चुवत अग्र गति मंदन।
मानहु भरि गंडूष कमल तैं डारत अलि आनन्दन।
भुज भरि अंक अगाध चलत लै ज्यौं लुब्धक खग फंदन।
सूरदास स्वामी श्रीपति के गुन गावत श्रुति छंदन[35]॥

कृष्ण और राधा 'बाहाँजोरी' खड़े होते हैं; अन्य सखियों में कोई जाँघ तक जल में है, कोई कमर, कोई हृदय और कोई गले तक—

बिहरत हैं जमुना-जल स्याम।
राजत हैं दोउ बाहौं-जोरी, दंपति अरु ब्रज-बाम।

---

३३. सा० ४१६६।   ३४. सा० ११५७।
३५. सा० ११५८।

कोऊ ठाढ़ीं जल जानु जाँघ लौं, कोउ कटि हिरदय ग्रीव।
यह सुख बरनि सकै ऐसौ को, सुंदरता की सींव
स्याम अंग चंदन की आभा, नागरि केसरि अंग।
मलयज-पंक कुमकुमा मिलिकै, जल-जमुना इक रंग।
निसि-स्रम मिट्यौ, मिट्यौ तन-आलस परसि जमुन भईं पावन।
सूर स्याम जल-मध्य जुवति-गन, जन-जन के मनभावन[३६]।

जलबिहार का बिनोदमय सुख सबको पुलकित कर देता है।

देखि री उमँग्यो जो सुख आजु।
जलबिहार-बिनोदमय सुख रुचिर तनु को साजु।
भीजि पट लपट्यौ सुभग उर, रही केसरि चय न।
सरस परस सुभाव त्याग्यौ, जगे निसि के नयन।
कछुक कुंचित केस माई, सरस सोभा भ्राज।
सुभग मानौ काम-द्रुम कौ, नयौ अंकुर राज।
जुवतिगन सब जूथ जित, तित भरत अंजुलि नीर।
सूर सुभग गुपाल-तन-रुचि, सुखद स्याम-सरीर[३७]।

यों तो ऊपर के सभी खेलों से मनोरंजन के साथ-साथ व्यायाम भी हो जाता है, परतु कंस के मल्लों की 'मल्लक्रीड़ा' में व्यायाम का भाव जितना है, उतना मनोरंजन का नहीं। बलराम और कृष्ण जब बड़े बड़े मल्लों को हरा देते हैं तब यह मानना पड़ता है कि उन्होंने भी 'कुश्ती' का अभ्यास किया होगा, यद्यपि सूर ने इसकी चर्चा नहीं की है। और 'सूरसागर' में रावण के योद्धा तो लंका में ठौर-ठौर पर 'कुंत-असि-बान' का निरंतर अभ्यास करते ही हैं।

नाना रूप निसाचर अद्भुत, सदा करत मद-पान।
ठौर ठौर अभ्यास महाबल करत कुंत-असि-बान[३८]।

(अः) वाणिज्य-व्यवसाय की वस्तुएँ—

नागरिक जीवन के चित्रण की ओर अधिक ध्यान न देने के कारण सूरदास

---

३६. सा० ११६२। ३७. सा० ११६१।
३८. सा० ६-७५।

ने अपने काव्य में तत्कालीन वाणिज्य-व्यवसाय की चर्चा नहीं की है। 'दान-लीला' प्रसंग के एक पद में उन्होंने व्यापार-योग्य ऐसी वस्तुओं की एक सूची दी है जो पंसारी के यहाँ मिलती हैं और उसमें अधिकांश मसाले हैं; यथा—अजवाइन आलमजीठ, कटजीरा, कायफर, कूट, चिरइता, दाख, नारियर, पीपरि, बहेरा, बाइबिडंग, मिरिच, लाख, लौंग, सुपारी, सोंठि, हरें और हींग—

> कहौ कान्ह कह गय है हमसौं।
> जा कारन जुबती सब अटकीं, सो बूझति हौं तुमसौं।
> लौंग, नारियर, दाख, सुपारी, कह लादे हम आवैं।
> हींग, मिरिच, पीपरि, अजवाइनि, ये सब बनिज कहावैं।
> कूट, कायफर, सोंठि, चिरइता, कठजीरा कहुँ देखत।
> आल मजीठ, लाल, सेंदुर कहुँ, ऐसिहिँ बिधि अवरेखत।
> बाइबिडंग, बहेरा, हरें, बेल, गोन व्यापारी।
> सूर स्याम लरकाई भूली, जोबन भएँ मुरारी[39] ॥

माल को मोल लेने के लिए पास में कौड़ी, टका या दाम तो चाहिए ही, इसका भी ध्यान सूरदास को रहा है—

> तू जानति मैं हूँ कछु जानत, जो-जो माल तुम्हारैं[40] ॥

× × × ×

> अब तुमकौं मैं जान न देहौं।
> दान लेउँ कौड़ी-कौड़ी करि, बैर आपनौ-लैहौं[41] ॥

× × × ×

> जाहु तहीं मोतिसरी गँवाई।
> तबहीं तौ घर पैठन पैहौ, अब ऐसैं ढँग आई।
> जो बरजौं आपुन सोई करै, देखौ री गुन माई।
> इक-इक नग सत-सत दामनि कौ, लाख टका दै ल्याई।
> जाकैं हाथ परयौ सो, घर बैठे निधि पाई।
> सूर सुनति री कुँवरि राधिका, तोकौं नहीं भलाई[42] ॥

---

३९. सा० १५२८। ४०. सा० १५२६।
४१. सा० १५४५। ४२. सा० १६७२।

एक चीज के बदले में दूसरी चीज भी, सूरदास के अनुसार, ली जा सकती है, यदि दोनों समान उपयोग या मूल्य की हों। मूली के पत्तों के बदले मुक्ताहल कोई नहीं दे सकता—

मूरी के पातन के बवैना को मुक्ताहल दै है[४३] !

४३. सा० ४२४७।

सामान्य लोक-व्यवहार

यों तो भोजन के पहले कनक-थार में हाथ धुलाना—जैसी समान्य व्यवहार-संबंधी अनेक बातें सूर-काव्य में बिखरी मिलती हैं—

> नंद-भवन मैं कान्ह अरोगैं। जसुदा ल्यावै षटरस भोगैं।
> आसन दै चौकी आगैं धरि। जमुना-जल राख्यौ झारी भरि।
> कनक-थार मैं हाथ धुवाए।.................................. ४४।

परन्तु इस शीर्षक के अंतर्गत केवल दो मुख्य विषयों से संबंधित कुछ बातों की चर्चा करना लेखक का अभीष्ट है—अ. शिष्टाचार और आ. स्वागत-सत्कार।

(अ) शिष्टाचार—

दूसरों के प्रति शिष्टाचार-प्रदर्शन के उद्देश्य से, सूर काव्य में जिन नमस्कारात्मक शब्दों का प्रयोग किया गया है, उनमें से जुहारा, दंडवत, नमस्कार, नमस्ते, पालागन, प्रनाम आदि मुख्य हैं; जैसे—

१. सूर आकासबानी भई तबै तहँ, यहै बैदेहि है, करु जुहारा[४५]।
२. देखि सुरूप सकल कृष्नाकृति, कीनी चरन जुहारी[४६]।
३. जामवंत सुग्रीव बिभीषन करी दंडवत आइ[४७]।
४. नमस्कार मेरौ जदुपति सौं कहियौ परि के पाइँ[४८]।
५. नमो नमस्ते बारंबार। मधुसूदन गोविंद मुरार[४९]।

---

४४. सा० ३९६।
४५. सा० ९-७६।
४६. सा० ८-१४।
४७. सा० ९-१६१।
४८. सा० ४१६०।
४९. सा० ४३०१।

६. लछिमन पालागन कहि पठयौ, हेत बहुत करि माता[५०]।

७. ये बसिष्ठ कुल-इष्ट हमारे, पालागन कहि सबनि सिखावत[५१]।

८. भरत सत्रुहन कियौ प्रनाम, रघुबर तिन्ह कहँ कंठ लगायौ[५२]।

९. तब परनाम कियौ अति रुचि सौं, अरु सबहिनि कर जोरे[५३]।

उक्त सभी शब्द पूज्य व्यक्तियों के प्रति आदर प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त हुए हैं, परंतु एक पद में पुत्र को मनाती हुई यशोदा 'पालागौं' का प्रयोग करती है जिससे खीझी हुई माता के हृदय का व्यंग्य प्रकट होता है—

(आछे मेरे) लाल हो, ऐसी आरि न कीजे।
पालागौं हठ अधिक करौ जनि, अति रिस तैं तन छीजे[५४]।

बड़ों को प्रणाम करने पर उनसे आशीर्वाद भी मिलता है। लक्ष्मण के 'पालागन' के उत्तर में सीता जी 'असीस' देती हैं—

दई असीस तरनि सन्मुख ह्वै, चिरजीवौ दोउ भ्राता[५५]।

(आ) स्वागत-सत्कार—

यों तो सूर-काव्य में अनेक स्थलों पर स्वागत-सत्कार का वर्णन किया गया है, परंतु ऐसे अवसरों पर प्रयुक्त सामग्री की जानकारी के लिए केवल तीन स्थलों की चर्चा करना पर्याप्त होगा—वनवास के पश्चात् अयोध्या लौटने पर श्रीराम का स्वागत, श्रीकृष्ण का संदेश लेकर आनेवाले उद्धव का गोपियों द्वारा स्वागत, और अक्रूर द्वारा श्रीकृष्ण का स्वागत।

श्रीराम के वन से लौटने पर अयोध्या में स्वागत का जो आयोजन किया जाता है वह इस प्रकार है—

जब सुन्यौ भरत पुर निकट भूप। तब रची नगर रचना अनूप।
प्रति प्रति गृह तोरन ध्वजा धूप। सजे सजल कलस अरु कदलि यूप।

---

५०. सा० ९-८७। ५१. सा० ९-१६७।
५२. सा० ९-५५। ५३. सा० १४८१।
५४. सा० १०-१९०। ५५. सा० ९-८७।

दधि दूब हरद फल फूल पान। कर कनक थार तिय करति गान।
सुनि भेरि बेद-धुनि संख नाद। सब निरखत पुलकित अति प्रसाद[५६]।

× × × ×

दधि फूल दूध कनक कोपर भरि, साजत सौंज बिचित्र बनाई।
बरन बरन पट परत पाँवड़े, बीथिनि सकुच सुगंध सिंचाई।
पुलकित रोम हरष गदगद स्वर, जुवतिनि मंगलगाथा गाई।
निज मंदिर मैं आनि तिलक दै, द्विजगन मुदित असीस सुनाई[५७]।

उद्धव के व्रज आने पर गोप-गोपियाँ उनके स्वागत का इस प्रकार आयोजन करती हैं—

व्रज घर-घर सब होत बधाइ।
कंचन कलस दूब दधि रोचन लै बृंदाबन आइ।
मिल व्रजनारि तिलक सिर कीनो, करि प्रदच्छिना तासु[५८]।

× × ×

अर्घ आरती साजि तिलक दधि माथैं कीन्यौ।
कंचन कलस भराइ और परिकरमा दीन्यौ।
गोप भीर आँगन भई, मिलि बैठी सब जाति।
जलझारी आगैं धरी, पूछत हरि कुसलाति[५९]।

सुफल-सुत अक्रूर को श्रीकृष्ण के शुभागमन की ज्यों ही सूचना मिलती है, वह—

मिल्यौ सु पाइ सुधि मग मैं बार बार परि पाइ।
गयौ लिवाइ सुभग मंदिर मैं, प्रेम न बरन्यौ जाइ।
चरन पखारि धारि जल सिर पर, पुनि पुनि दृगनि लगाइ।
बिबिध सुगंध चीर आभूषन, आगैं धरे बनाइ[६०]।

सारांश यह है कि परम प्रिय या पूज्य व्यक्ति के शुभागमन पर गृह-तोरण सजाना, जलभरे कंचन कलश प्रस्तुत करना, कदलि-यूप बनाना, कनक-थाल या

---

५६. सा० ६-१६६। ५७. सा० ६-१६६।
५८. सा० ३४७६। ५६. सा० ४०६५।
६०. सा० ४१६०।

कोपर में दधि-दूब-रोचन-फल-फूल-पान आदि लेकर युवतियों का मंगलगान करना, वेद-पाठ होना, भेरि-शंख-ध्वनि करना, बरन बरन के पट-पाँवड़े बिछाना, बीथियों को सुगंध से सिंचाना आदि आयोजनों की चर्चा सूर-काव्य में मिलती है। पश्चात् प्रिय या पूज्य व्यक्ति का दर्शन होने पर उसको अर्घ्य देकर, चरणामृत को सिर और दृगों से लगाकर, आरती करके, दधि का तिलक माथे पर लगाकर, 'प्रदच्छिना' या 'परिकरमा' करने का भी उसमें उल्लेख है। अंत में शक्ति और श्रद्धा के अनुसार सुगंधि-चीर-आभूषण आदि प्रस्तुत किये जाते थे। निस्संदेह स्वागत का ऐसा उत्साहपूर्ण आयोजन उभय पक्षों का हृदय पुलकित करने में समर्थ होता है।

पौराणिक विश्वास

सूरदास ने पौराणिक विश्वास के अनुसार श्रीकृष्ण को परब्रह्म का अवतार माना है और उनके लिए अबिगत-अबिनासी, कला-निधान, जगतगुरु-जगतपिता-जगदीस, जगन्नाथ, जगपाल, दीनानाथ, पुरुषोत्तम, मधुसूदन, सकल गुनसागर, सुखसागर आदि बड़े व्यापक अर्थवाले शब्दों का प्रयोग किया है—

'अबिगत अबिनासी, पुरुषोत्तम, हाँकत रथ कै आन।
अचरज कहा पार्थ जो बेधै, तीनि लोक इक बान[६१]।"

× × × ×

कलानिधान, सकल गुन-सागर, गुरु धौं कहा पढ़ाए हो[६२]।

× × × ×

बासुदेव की बड़ी बड़ाई।
जगत-पिता, जगदीस, जगत-गुरु, निज भक्तनि की सहत ढिठाई[६३]।

× × × ×

हँसि कै बोलीं रोहिनी, जसुमति मुसुकाई।
जगन्नाथ धरनीधरहिं, सूरज बलि जाई[६४]॥

× × × ×

अब धौं कहौ, कौन दर जाउँ ?
तुम जगपाल चतुर चिंतामनि, दीनबंधु सुनि नाउँ[६५]।

× × × ×

राख्यौ गोकुल बहुत बिघन तैं, कर-नख पर गोबर्धन धारी।
सूरदास प्रभु सब सुख-सागर, दीनानाथ, मुकुंद, मुरारी[६६]।

---

६१. सा० १-२६६। ६२. सा० १-७।
६३. सा० १-३। ६४. सा० १०-१६२।
६५. सा० १-१६५। ६६. सा० १-२२।

× × × ×

अबिगत, अबिनासी, पुरुषोत्तम, हाँकत रथ के आन[67]।

× × × ×

कंत सिधारो मधुसूदन पै सुनियत हैं वे मीत तुम्हारे[68]।

× × × ×

कलानिधान सकल गुन सागर धौं कहा पढ़ाए हो[69]।

× × × ×

सूरदास प्रभु सब सुखसागर दीनानाथ मुकुंद मुरारी[70]।

'आदि निराकार' के चौबीस अवतारों को गिनाना भी सूरदास नहीं भूले हैं, जैसा निम्न पद से स्पष्ट है—

जो हरि करै सो होइ, करता राम हरी।
ज्यौं दरपन-प्रतिबिंब, त्यौं सब सृष्टि करी।
आदि निरंजन, निराकार, कोउ हुतौ न दूसर।
रचौं सृष्टि बिस्तार, भई इच्छा एक औसर।
त्रिगुन प्रकृति तैं महत्तत्व महतत्व तैं अहँकार।
मन-इन्द्री-सब्दादि-पँच, तातैं कियौ बिस्तार।
सब्दादिक तैं पँचभूत सुंदर प्रगटाए।
पुनि सबकौ रचि अंड, आपु मैं आपु समाए।
तीनि लोक निज देह मैं राखे करि बिस्तार।
आदि पुरुष सोई भयौ, जो प्रभु अगम अपार।
नाभि कमल तैं आदि पुरुष मोकौं प्रगटायौ।
खोजत जुग गए बीति, नाल कौ अंत न पायौ।
तिन मोकौं आज्ञा करी, रचि सब सृष्टि बनाइ।
थावर-जंगम, सुर-असुर, रचे सबै मैं आइ।
मच्छ कच्छ बाराह, बहुरि नरसिंह रूप धरि।
बामन बहुरौ परसुराम, पुनि राम रूप करि।
बासुदेव सोई भयौ, बुद्ध भयौ पुनि सोइ।

---

६७. सा० १-२६६। ६८. सा० ४२२६।
६९. सा० १-२२१। ७०. सा० १-२२।

सोइ कल्की होइहै, और न द्वितिया कोइ।
ये दस हरि अवतार, कहे पुनि और चतुर दस।
भक्त बछल भगवान, धरे तन भक्तनि कैं बस।
अज, अबिनासी, अमर प्रभु, जनमै-मरे न सोइ।
नटवत करत कला सकल, बूझै बिरला कोइ।
सनकादिक, पुनि व्यास, बहुरि भए हंस रूप हरि।
पुनि नारायन, ऋषभ देव,नारद धनवंतरि।
दत्तात्रेयऽरु पृथु बहुरि, जज्ञ पुरुष-बपु धार।
कपिल-मनू हयग्रीव पुनि, कीन्हौ ध्रुव अवतार।
भूमि रेनु कोऊ गनै, नछत्रनि गनि समुझावै।
कह्यौ चहै अवतार, अंत सोऊ नहिं पावै।
सूर कहौ क्यौं कहि सकै, जन्म-कर्म-अवतार।
कहे कछुक गुरु कृपा तैं श्री भागवतऽनुसार[७१] ॥

श्रीराम और श्रीकृष्ण की एकता की चर्चा भी सूरदास ने बड़े विस्तार से की है। इंद्रादि देवता स्तुति करते हैं —

जै गोविंद माधव मुकुंद हरि। कृपा-सिंधु कल्यान कंस-अरि।
प्रनतपाल केसव कमलापति। कृष्न कमल-लोचन अगतिनि गति।
रामचंद्र राजीव नैन बर। सरन साधु श्रीपति सारँगधर।
बनमाली बामन बीठल बल। बासुदेव बासी-ब्रज-भूतल।
खर दूखन त्रिसिरासुर खंडन। चरन-चिह्न दंडक भुव मंडन।
बकी-दवन बक-बदन बिदारन। बरुन बिषाद नंद निस्तारन।
रिषि मष त्रान ताड़का-तारक। बन बसि तात बचन प्रतिपालक।
काली दवन केसि कर पातन। अघ अरिष्ट धेनुक अनुघातन।
रघुपति प्रबल पिनाक-बिभंजन। जग हित जनकसुता मन रंजन।
गोकुलपति गिरधर गुनसागर। गोपी रवन रास रति नागर।
करुनामय कपिकुल हितकारी। बालि बिरोध कपट मृग हारी।
गुप्त गोप कन्या ब्रत पूरन। द्विज नारी दरसन दुख चूरन।

---

७१. सा० २-३६।

रावन कुंभकरन सिर छेदन। तरुवर सात एक सर भेदन।
संख चूड़ चूनर सँहारन। सक्र कहै मम इच्छा कारन।
उत्तर क्रिया गीध की करी। दरसन दै सबरी उद्धरी[७२]।

पद के एक चरण में श्रीराम और दूसरे में श्रीकृष्ण की स्तुतिवाले ऐसे उदाहरण समस्त भक्ति-साहित्य में बहुत कम मिलेंगे। दोनों देवों की शक्तियों को भी कवि ने एक ही रूप में देखा है। सीता जी को जिस प्रकार उन्होंने 'जगत जननी' कहा है—

इहिं बिधि बन बसे रघुराइ।
डासि कै तृन भूमि सोवत, द्रुमनि के फल खाइ।
जगत-जननी करी बारी, मृगा चरि चरि जाइ[७३]।

उसी प्रकार राधा जी को भी 'सेस महेस गनेस सुकादिक नारदादि की स्वामिनि, जगदीस-पियारी, जगत-जननि, जगरानी' आदि बताया है—

नीलांबर पहिरे तनु भामिनि, जनु घन दमकति दामिनि
सेस, महेस, गनेस, सुकादिक, नारदादि की स्वामिनि॥
जग नायक, जगदीस-पियारी, जगत-जननि जगरानी[७४]

इसके अतिरिक्त अनेक पौराणिक प्रसंग भी कवि ने लिखे हैं। गोबर्द्धन प्रसंग में इंद्र की पराजय, बाल-वत्स-हरण प्रसंग में ब्रह्मा का भ्रम, मोहिनी-दर्शन-प्रसंग में महादेव का मोह आदि विषयों के द्वारा कवि अपने आराध्य की सर्वश्रेष्ठता इंगित करता है। नारद और वेद उसके आराध्य की स्तुति करके इस पौराणिक विश्वास की पुष्टि करते हैं। नारद की स्तुति इस प्रकार है—

प्रभु तुव मर्म समुझि नहिं परै।
जग सिरजत पालत संहारत, पुनि क्यौं बहुरि करै॥
ज्यौं पानी मैं होत बुदबुदा पुनि ता माहिं समाइ।
त्यौं ही सब जग प्रगटत तुमतैं, पुनि तुम माहिं बिलाइ॥
माया जलधि अगाध महाप्रभु, तरि न सकै तिहिं कोई।
नाम जहाज चढ़ै जो कोऊ, तुव पद पहुँचै सोइ॥

---

७२. सा० ९८१। ७३. सा० १-६०।
७४. सा० १०५०।

पापी नर लोहे जिमि प्रभू जू, नाहीं तासु निबाह।
काठ उतारत पार लोह ज्यौं, नाम तुम्हारौ ताह॥
पारस परसि होत ज्यौं कंचन, लोहपनो मिटि जाइ।
त्यौं अज्ञानी ज्ञानहिं पावत नाम तुम्हारो गाइ॥
अमर होत ज्यौं संसय नासै, रहत सदा सुख पाइ।
यातैं होत अधिक सुख भगतनि, चरन-कमल चित लाइ॥
थावर जंगम सब तुम सुमिरत, सनक सनंदन ताहीं।
ब्रह्मा सिव अस्तुति न सकैं करि, मैं बपुरा केहि माहीं॥
जोग ध्यान करि देखत जोगी, भक्त सदा मोहिं प्यारौ॥
ब्रज बनिता भजियौ मोहिं नारद, मैं तिन पार उतारौ॥
नारद ज्यौं हरि अस्तुति कीन्ही, सुक त्यौं कहि समुझाई।
सूरज प्रेम भक्ति की महिमा, श्री पति श्री मुख गाई[७५]॥

बेदों की उत्पत्ति की चर्चा करके उनके द्वारा श्रीकृष्ण की स्तुति सूरदास ने इस प्रकार करायी है—

हरि जू कैं हिरदै यह आई - देउँ सबनि यह रूप दिखाई।
तीन लोक हरि कर बिस्तार। अपनी जोति कियो बिस्तार।
जैसैं कोऊ गेह सँवार। दीपक बारि करै उजियार।
त्यौं हरि जोति अपनी प्रगटाई। घट-घट मैं सोई दरसाई।
तीनहु लोक सगुन तन जानौ। जोति सरूप आत्मा मानौ।
स्वासा तासु भए स्रुति चार। करैं सो अस्तुति या परकार।
नाथ तुम्हारी जोति अभास। करति सकल जग मैं परकास।
थावर जंगम जहँ लगि भए। जोति तुम्हारी चेतन किए।
तुम सब ठौर सबनि ते न्यारे। को लखि सकै चरित्र तुम्हारे।
स्वयं प्रकास तुम साक्षी सदा। जीव कर्म करि बंधन बँधा।
सर्बव्यापी तुम सब ठाकुर। तुमहिं दूरि जानत नर बाहर।
तुम प्रभु सबके अंतरजामी। बिसरि रह्यौ जिव तुमकौं स्वामी।
तुम्हरी माया जग उपजाया। जैसे कौ तैसे मग लाया।
गुग परमान कियौ ब्यौहार। तुम्हरी लीला अगम अपार।

---

७५. सा० ४३०२।

अद्भुत सगुन चरित्र तुम्हारे। जे करि कै भू भार उतारे।
तिनकौ समुझि सकत नहि कोई। निरगुन रूप लखै क्यौं सोई।
नर तन भक्ति तुम्हारी होइ। ज्यौं तन में जिव आश्रम सोइ।
भक्ति करै सो उतरै पार। नमो नमो तुम्हैं बारंबार।
सुक जैसी बिधि अस्तुति गाई। तैसे ही मैं कहि समुझाई।
जो यह अस्तुति सुनै सुनावै। सूर सु ज्ञान भक्ति को पावै[७६]।

कवि ने उनके विराट् रूप की आरती का भी वर्णन किया है—

हरि जू की आरती बनी।
अति विचित्र रचना रचि राखी, परति न गिरा गनी।
कच्छप अध आसन अनूप अति, डाँडी सहस फनी।
मही सराव, सप्त सागर घृत, बाती सैल घनी।
रवि-ससि-ज्योति जगत परिपूरन, हरति तिमिर रजनी।
उड़त फूल उडगन नभ अंतर, अंजन घटा घनी।
नारदादि - प्रजापति - सुर - नर - असुर - अनी।
काल-कर्म - गुन - ओर - अंत नहिं, प्रभु इच्छा रचनी।
यह प्रताप दीपक सुनिरंतर, लोक सकल भजनी।
सूरदास सब प्रगट ध्यान मैं अति बिचित्र सजनी[७७]।

अनन्य भक्ति की महिमा, नाम माहात्मय और प्रभु की भक्त-वत्सलता की चर्चा भी सूरदास ने अन्यान्य भक्त कवियों के स्वर में स्वर मिला कर की है—

गोविंद सौ पति पाइ, कहँ मन अनत लगावै?
स्याम-भजन बिनु सुख नहीं, जो दस दिसि धावै।
पति कौ ब्रत जो धरै तिय, सो सोभा पावै।
आन पुरुष कौ नाम लै, पतिब्रतहिं लजावै।
गनिका उपज्यौ पूत, सो कौन को कहावै?
बसत सुरसरी तीर, मंदमति कूप खनावै।
जैसैं स्वान कुलाल के पाछैं लगि धावै।
आन देव हरि तजि भजै, सो जनम गँवावै।

७६. सा० ४३०० । ७७. सा० २-२८ ।

फल की आसा चित धरि, जो बृच्छ बढ़ावै।
महा मूढ़ सो मूल तजि, साखा जल नावै।
सहज भजे नँदलाल कौं, सो सब सचु पावै।
सूरदास हरि नाम ले, दुख निकट न आवै[७८]।

× × ×

को को न तर्यौ हरि - नाम लिएँ।
सुवा पढ़ावत गनिका तारी, ब्याध तर्यौ सर-घात किएँ।
अंतरदाह जु मिट्यौ ब्यास कौ इक चित ह्वै भागवत किएँ।
प्रभु तैं जन, जन तैं प्रभु बरतत, जाकी जैसी प्रीति हिएँ।
जांपै राम-भक्ति नहिं जानी, कह सुमेरु सम दान दिएँ ?
सूरजदास बिमुख जो हरि तैं, कहा भयौ जुग कोटि जिएँ[७९] ?

× × ×

बड़ी है राम नाम की ओट।
सरन गएँ प्रभु काढ़ि देत नहिं, करत कृपा कैं कोट।
बैठत सबै सभा हरि जू की, कौन बड़ो को छोट ?
सूरदास पारस के परसैं मिटति लोह की खोट[८०]।

× × ×

भक्तबछल श्री जादव राइ।
भीषम की परतिज्ञा राखी, अपनौ बचन फिराइ।
भारत माहिं कथा यह बिस्तृत, कहत होइ बिस्तार।
सूर भक्त - बत्सलता बरनौं, सर्ब कथा कौ सार[८१]।

इसी प्रकार गुरु, भक्ति और सत्संग की महिमा का गान भी सूरदास ने अनेक पदों में किया है—

हरि हरि, हरि हरि सुमिरन करौ। हरि-चरनारबिंद उर धरौ।
हरि गुरु एक रूप नृप जानि। यामैं कछु सन्देह न आनि।
गुरु प्रसन्न हरि परसन होइ। गुरु कैं दुखित दुखित हरि जोइ[८२]।

---

७८. सा० २-६।
७९. सा० १-८६।
८०. सा० १-२३२।
८१. सा० १-२६७।
८२. सा० ६-५।

× × ×

भक्त सकामी हू जो होई। क्रम-क्रम करिकै उधरै सोइ।
सनै सनै बिधि लोकहिं जाइ। ब्रह्मा सँग हरि-पदहिं समाइ।
निष्कामी बैकुंठ सिधावै। जनम-मरन तिहि बहुरि न आवै।
त्रिबिध भक्ति कहीं अब सोइ। तातैं हरि-पद प्रापति होइ।
एकै कर्म-जोग कौ करैं। बरन-आसरम धर्म बिस्तरैं।
अरु अधर्म कबहूँ नहिं करैं। ते नर याहीं बिधि निस्तरैं।
एकै भक्ति-जोग कौ करैं। हरि-सुमिरन पूजा बिस्तरैं।
हरि-पद पंकज प्रीति लगावैं। ते नर हरि पद को या बिधि पावैं।
एकै ज्ञान-जोग बिस्तरैं। ब्रह्म जानि सब सौं हित करैं।
ते हरि-पद कौं या बिधि पावैं। क्रम-क्रम सब हरि-पदहिं समावैं[८३]।

× × ×

जा दिन संत पाहुने आवत।
तीरथ कोटि सनान करैं फल जैसो दरसन पावत।
नयौ नेह दिन-दिन प्रति उनकैं चरन-कमल चित लावत।
मन बच कर्म और नहिं जानत, सुमिरत औ सुमिरावत।
मिथ्यावाद-उपाधि-रहित है, बिमल बिमल जस गावत।
बंधन कर्म कठिन जो पहिले, सोऊ काटि बहावत।
संगति रहै साधु की अनुदिन, भव-दुख दूरि नसावत।
सूरदास संगति करि तिनकी, जे हरि-सुरति करावत[८४]।

गंगा या विष्णु-पादोदक और यमुना की स्तुति भी 'सूरसागर' के कुछ पदों में की गयी है—

पिउ पद कमल कौ मकरंद।
मलिन-मति मन-मधुप, परिहरि, बिषय नीरस मंद।
अमृत हूँ तैं अमल अति गुन, स्रवत निधि-आनंद।
परम सीतल जानि संकर, सिर धरयौ ढिग चंद।

---

८३. सा० ३-१३। ८४. सा० १-१७।

नाग-नर-पसु सबनि चाह्यौ सुरसरी को बुंद।
सूर तीनौ लोक परस्यौ, सुरसरी जस-छंद[८५]।

× × × ×

भक्त जमुने सुगम, अगम औरैं।
प्रात होत न्हात, अघ जात ताके सकल ताहि जम हू रहत हाथ जोरैं।
अनुभवी जानही बिना अनुभव कहा, प्रिया जाको नहीं चित्त चोरै।
प्रेम के सिंधु कौ मर्म जान्यौ नहीं सूर कहि कहा भयौ देह बोरैं[८६]।

× × × ×

फल फलति होत फल रूप जानैं।
देखिहू सुनिहु नहिं ताहि अपनौ कहै, ताकी यह बात कोऊ कैसैं मानै।
ताहि कैं हाथ निरमोल नग दीजियै, जोइ नीकैं परखि ताहि जानै।
सूर कहि कूर तें दूर बसियै सदा, जमुन कौ नाम लीजै जु छानै[८७]॥

श्रीमद्भागवत के अनुसार कुछ वर्णन करने का उल्लेख 'सूरसागर' के अनेक पदों में मिलता है। इस प्रकार 'भागवत' की महिमा का गान भी सूरदास करते हैं—

व्यासदेव जब सुकहिं पढ़ायौ। सुनिकै सुक सो हृदय बसायौ।
सुक सौं नृपति परीक्षित सुन्यौ। तिनि पुनि भली भाँति करि गुन्यौ।
सूत सौनकनि सौं पुनि कह्यौ। बिदुर सो मैत्रेय सौं लह्यौ।
सुनि भागवत सबनि सुख पायौ। सूरदास सो बरनि सुनायौ[८८]।

इनके अतिरिक्त वाराणसी, मथुरा, वृंदावन और व्रज के माहात्म्य का भी वर्णन करना सूरदास नहीं भूले हैं—

बन बारानसि मुक्ति-क्षेत्र है, चलि तोकौं दिखराऊँ[८९]।

× × ×

मथुरा दिन-दिन अधिक बिराजै।
तेजु प्रताप राइ केसौ कैं, तीनि लोक पर गाजै।
पग पग तीरथ कोटिक राजैं मधि बिश्रांत बिराजै।
करि अस्नान प्रात जमुना कौ, जन्म मरम भय भाजै।

---

८५. सा० ६-१०।
८६. सा० १-२२२।
८७. सा० १-२२३।
८८. सा० १-२२७।
८९. सा० १-३४०।

बिट्ठल बिपुल बिनोद बिहारन, ब्रज कौ बसिबौ छाजै।
सूरदास सेवक उन्हीं कौ, कृपा जु गिरधर राजै[९०]।

× × × ×

जय जय जय मथुरा सुखकारी।
चक्र सुदरसन ऊपर राजति, केसव जू की प्यारी[९१]।

× × ×

जो सुख होत गुपालहिं गाएँ।
सो सुख होत न जप-तप कीन्हें, कोटिक तीरथ न्हाएँ।
दिएँ लेत नहि चारि पदारथ, चरन-कमल चित लाएँ।
तीनि लोक तृन सम करि लेखत, नंद नँदन उर आएँ।
बंसीबट, बृन्दावन, जमुना तजि बैकुंठ न जावै।
सूरदास हरि को सुमिरन करि, बहुरि न भव-जल आवै[९२]।

× × ×

ऐसैं बसिए ब्रज की बीथिनि।
ग्वारनि के पनवारे चुनि-चुनि, उदर भरीजै सीथिनि।
पैंड़े के सब बृच्छ बिराजत छाया परम पुनीतिनि।
कुंज-कुंज प्रति लोटि लोटि ब्रज रज लागै रँग रीतिनि।
निसि दिन निरखि जसोदा-नंदन, अरु जमुना-जल पीतनि।
परसत सूर होत तन पावन, दरसन करत अतीतनि[९३]।

इनके अतिरिक्त 'अछै बट बृच्छ', चंद्रमा को राहु का ग्रसना, चंद्रमा के रथों में मृगों का जुता होना, अमृत देवेंद्र के पास होना और उसकी वृष्टि से मृतकों का जी उठना आदि प्रसंग भी प्राचीन आख्यानों से संबंधित हैं—

महा प्रलय हमरे जल बरसैं, गगन रहे भरि छाइ।
अछै बृच्छ बट बचत निरंतर, कह ब्रज गोकुल गाइ[९४]।

× × ×

बारंबार बिसूरि सूर दुख, जपत नाम रघुनाहु।
ऐसी भाँति जानकी देखी, चंद गह्यौ ज्यौं राहु[९५]।

---

९०. सा० ३०६६। ९१. सा० ३०६७।
९२. सा० २-६। ९३. सा० ४६०-४६२।
९४. सा० ८५४। ९५. सा० ६-७५।

× × × ×

दूरि करहु बीना कर धरिबौ।
रथ थाक्यौ, मानौ मृग मोहे, नाहिंन होत चन्द्र कौ ढरिबौ[१६]।

× × × ×

सुरपतिहिं बोलि रघुबीर बोले।
अमृत की बृष्टि रनखेत-ऊपर करौ, सुनत तिन अमिय-भंडार खोले।
उठे कपि-भालु ततकाल जै-जै करत, असुर भए मुक्त, रघुबर निहारे।
सूर प्रभु अगम-महिमा न कछु कहि परति, सिद्ध गंधर्व जै-जै उचारे[१७]॥

उक्त पदों में प्रयुक्त शब्दावली से तत्कालीन हिंदू समाज की, पौराणिक प्रसंगों के प्रति, विश्वासमयी निष्ठा का सहज ही परिचय मिल जाता है। हनुमान को 'आकासबाणी' और कंस को 'अनाहतबानी' सुनायी देना भी पौराणिक विश्वास का फल कहा जायगा—

सोच लाग्यौ करन यहै धौं जानकी कै कोऊ और, मोहिं चहि चिन्हारा।
सूर आकासबानी भई तबै तहँ यहै बैदेहि है करु जुहारा[१८]।

× × × ×

समदत भई अनाहतबानी, कंस-कान झनकारा[१९]।

अष्टसिद्ध, उच्चैःस्रवा, (धवल बरन) ऐरावत, कल्पद्रुम, कामधेनु या सुरधेनु, चिंतामनि, नव निधि आदि के उल्लेख भी पौराणिक विश्वास का समर्थन करते हैं—

मागध मंगन जन लेत, मन भाइ कै।
अष्ट सिद्धि नवो निधि आगे ठाढीं आइ के[१]।

× × × ×

जादवबीर बटाइ बटाई, हरि बल इक इक ओर।
निकसे सबै कुँवर असवारी, उचैस्रवा के पोर[२]॥

× × × ×

---

१६. सा० ३३५७। १७. सा० ६-१६३।
१८. सा० ६-७६। १९. सा० १०-४।
१. सा० १०६२। २. सा० ४१६६।

सुरगन सहित इन्द्र ब्रज आवत।
धवल बरन ऐरावत देख्यौ उतरि गगन तें धरनि धँसावत[3] ।

× × ×

कल्पद्रुम-तर छाँह सीतल, त्रिबिधि बहति समीर।
बर लता लटकतिं भार कुसुमनि, परसि जमुना नीर[4] ॥

× × ×

रंक सुदामा कियो अजाची, दियौ अभय-पद ठाउँ।
कामधेनु, चिंतामनि, दीन्हौं कल्पवृच्छ-तर छाउँ[5] ॥

× × ×

अनुदिन सुर-तरु, पंच सुधा रस, चिंतामनि सुरधेनु[6] ।

× × ×

रंक सुदामा कियौ अजाची, दियौ अभय पद ठाउँ।
कामधेनु चिंतामनि दीन्हौं, कल्पवृच्छ-तर छाउँ[7] ।

× × ×

मागध मंगन जन लेत, मन भाइ कै।
अष्ट सिद्धि, नवोनिधि आगे ठाढ़ीं आइ कै[8] ॥

किन्नर, गंधर्व, विद्याधर आदि देवजातियाँ भी पौराणिक हैं—

बजे देव लोक नीसान। बरसत सुमन करत सुर गान।
मुनि किन्नर जय ध्वनि करैं[9] ।

× × ×

सुर-गंधर्ब जे नेवति बुलाए। ते सब बधुनि सहित तहँ आए[10] ।

× × ×

विद्याधर-किन्नर कलोल मन उपजावत मिलि कंठ अमित गति[11] ।

---

३. सा० ६७६ । ४. सा० २८३३ ।
५. सा० १-१६४ । ६. सा० ४८७ ।
७. सा० १-१६४ । ८. सा० ३०६२ ।
६. सा० ११८० । १०. सा० ४-५ ।
११. सा० १०-६ ।

पृथ्वी को कमठ, शेषनाग आदि धारण करने का विश्वास भी पौराणिक ही है—

सेष के सीस लागे कमठ पीठि सौं धँसे गिरिवर सबै तासु भाए[१२]।

श्रीकृष्ण की लीला देखने को देवताओं का उपस्थित होना और प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्य की सिद्धि पर फूल बरसाने लगना—ऐसे उल्लेखों के मूल में भी पौराणिक विश्वास ही समझना चाहिए—

कौतुक देखत देवता, आए लोक बिसारि।

× × ×

लीन्हे बिप्र बुलाइ जग आरम्भन कीन्हौं ॥
सुरपति-पूजा मेटि, भोग गोबर्धन दीन्हौं।
दिवस दिवारी प्रातहीं, सब मिलि पूजे जाइ ॥

× × ×

जय-जय-धुनि अमरनि नभ कीन्हौं।
धन्य-धन्य जगदीस गुसाईं, अपनौ करि अहि लीन्हौ[१३] ॥

× × ×

पुहुप बृष्टि देवनि मिलि कीन्हीं, आनंद मोद बढ़ाए।
ब्रज-जन, नंद-जसोदा हरषे, सूर सुमंगल गाए[१४] ॥

---

१२. सा० ६-७६। १३. सा० ८४१।
१४. सा० ५७६।

धार्मिक विश्वास

धर्मप्राण हिंदू समाज आदि से ही आस्तिक रहा है। ईश्वर के अस्तित्व में ही नहीं, उसकी ऐसी दयालुता-उदारता आदि में भी उसका विश्वास रहा है जिससे प्रेरित होकर वह जीव या प्राणी के बड़े से बड़े पापों को भुलाकर उसको सहर्ष अपना सकता है और उसकी आंतरिक कामना के अनुसार सद्गति दे सकता है। यही नहीं, सारी लौकिक विभूति को, धर्म-भाव रखनेवाला व्यक्ति, अपने आराध्य या कुलदेव की ही देन समझता है। सूरदास ने भारतीय जनता की इस मनोवृत्ति को समझा था। इसलिए उनके सभी पात्र ईश्वर की दयालुता में विश्वास रखते हैं। गोबर्द्धन-पूजा के पूर्व व्रजवासी सुरपति को ही अपना कुलदेव समझते थे। उनकी पूजा का स्मरण कराती हुई माता यशोदा कहती है कि हमारे यहाँ जो कुछ है, सब कुलदेव की कृपा से ही है—

> जाकी कृपा बसत व्रज भीतर, जाकी दीन्ही भई बड़ाई।
> जाकी कृपा दूध-दधि पूरन, सहस मथानी मथति सदाई।
> जाकी कृपा अन्न-धन मेरैं, जाकी कृपा नवौ निधि आई।
> जाकी कृपा पुत्र भए मेरैं, कुसल रहौ बलराम कन्हाई[१५]।

किसी भी आशातीत लाभ को हिंदू स्त्रियाँ मानवीय पुरुषार्थ का फल न मानकर, सदय दैव की दया-प्रेरित देन अथवा अपने पुण्यों का फल समझती हैं। यही भाव यशोदा की प्रकृति में मिलता है जब पुत्र होने पर वह कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करती है—

> सत संजम तीरथ-व्रत कीन्हें तब यह संपति पाई[१६]।

लौकिक विभूतियों का योग भी ईश्वर को अर्पण करके ही भोगने का हमारे

---

१५. सा० ८११। १६. सा० १०-१६।

यहाँ विधान है। इसका निर्वाह कम से कम भोजन के पूर्व भगवान का भोग लगाने में तो किया ही जाता है। महराने से नंद जी के यहाँ आया हुआ पाँडे तो इष्टदेव का ध्यान करके भोग लगाता ही है—

घृत मिष्टान्न खीर मिश्रित करि परसि कृष्न हित ध्यान लगायौ[१७]।

अशोकवाटिका में हनुमान भी फलों का भोजन करने के पूर्व प्रभु को अर्पण कर देते हैं—

मनसा करि प्रभुहिं अर्पि भोजन करि डाटे[१८]।

इसी प्रकार दैहिक, दैविक और भौतिक संकटों से उद्धार होने पर भी नंद या यशोदा, दोनों अपने पुरुषार्थ का गर्व न करके ईश्वर की कृपा या अपने पूर्व जन्म के पुण्यों का ही स्मरण करते हैं। प्रलंबासुर के हाथ से जब कृष्ण बचकर आते हैं, तब यशोदा कहती है—

धर्म सहाइ होत है जहँ तहँ, स्रम करि पूरब पुन्य पच्यौ री[१९]।

ऐसे ही नंद जब वरुण के यहाँ से बचकर आते हैं, तब भी यशोदा कहती है—

अब तौ कुसल परी पुन्यनि तैं[२०]।

जहाँ ब्रजवासियों को ईश्वर की कृपा पर विश्वास है, वहाँ कुछ भूल-चूक हो जाने पर वे भयभीत भी हो जाते हैं। यशोदा जब कुल-देवता की पूजा भूल जाती है तब उसके कोप से डरती है और तुरंत क्षमा माँग लेती है—

छमा कीजौ मोहिं, हौं प्रभु तुमहिं गयौ भुलाई[२१]।

नंद जब हरि-पूजा करके भोग लगाते हैं और देवता को खाता न देख बालक कृष्ण, इस पर उपहास-सा करता हुआ, पूछ बैठता है—

कहत कान्ह, बाबा तुम अरप्यौ, देव नहीं कछु खाइ[२२]।

तब बालक ने देवता का उपहास किया, इससे भयभीत होकर वे कृष्ण से कहते हैं—हाथ जोड़ो, जिससे सकुशल रहो—

सूर स्याम देवनि कर जोरहु, कुसल रहै जिहिं गात[२३]।

---

१७. सा० १०-२४८। १८. सा० ६-६६।
१९. सा० ६०६। २०. सा० ६८५।
२१. सा० ८१४। २२. सा० १०-२६१।
२३. सा० १०-२६१।

यों तो 'स्रवन कीरतन सुमिरन पाद-सेवन अरचन ध्यान बंदन' आदि भक्ति के विविध रूपों की चर्चा सूर-काव्य में है—

स्रवन-कीरतन- सुमिरन करै। पद-सेवन-अरचन उर धरै।
बंदन दासपनो सो करै। भक्तनि सख्य-भाव अनुसरै[२४] ॥

परंतु ब्रजवासियों का विश्वास पूजा, व्रत, स्नान,दान, तीर्थयात्रा, तप आदि में विशेष रूप से दिखाया गया है।

(अ) पूजा—

इंद्र, गोबर्द्धन, शिव, पार्वती, सूर्य और शालग्राम की पूजा की चर्चा सूर-काव्य में अनेक पदों में है। इंद्र की पूजा का चलन ब्रज में गोबर्द्धन की पूजा के पूर्व बताया गया है। इसके लिए नन्द के यहाँ विशेष आयोजन होता है। चारो ओर मंगल-गान हो रहा है। प्रातःकाल की पूजा के लिए साँझ से ही भाँति-भाँति के नेवज करके धर दिये गये हैं। इंद्र की पूजा के लिए यह सारा भोग है; वह अपवित्र न हो जाय, इस डर से उसे छुआछूत से बचाया जाता है—

घरनि चलीं सब कहि जसुमति सौं। देव मनावतिं बचन बिनती सौं।
तुम बिन और नहीं हम जानैं। मन मन अस्तुति करत बखानैं ॥
जहाँ तहाँ ब्रज मंगल गानैं। बाजत ढोल मृदंग निसानै ॥
बहु बहु भाँति करतिं पकवानैं। नेवज करि धरि साँझ बिहानैं ॥
छुवत नहीं देव-काज सकानै। देव - भोग कौं रहत डरानै ॥
सूरदास हम सुरपति जानैं। और कौन ऐसो जिह मानै[२५] ॥

बच्चों को इतनी समझ नहीं होती; वे भोग को कहीं अपवित्र न कर दें, इसलिए यशोदा सारे नेवज, श्याम से बचाकर, सैंतकर रखती है—

महरि सबै नेवज लै सैंतति। स्याम छुवै कहुँ ताकौं डरपति[२६] ॥

गोबर्द्धन-पूजा के लिए सभी घरों में नाना प्रकार के भोजन बनते हैं। सबके द्वार पर बधाई बजती है। शकटों में देव-'बलि' सजाकर सब गोबर्द्धन के पास ले

---

४२. सा० ६-५। २५. सा० ८६१।
२६. सा० ८६३।

चलते हैं। दधि-लवनी-मधु-मिठाई-पकवान आदि के इतने प्रकार तैयार किये गये हैं कि कवि उनका वर्णन नहीं कर पाता और नंद के घर से तो सामग्री से भरें सहस्र शकट चलते हैं—

ब्रज-घर-घर सब भोजन साजत। सबकें द्वार बधाई बाजत ॥
सकट जोरि ले चले देव-बलि। गोकुल ब्रजवासी सब हिलि मिलि ॥
दधि लवनी मधु साजि मिठाई। कहँ लगि कहौं सबै अधिकाई ॥
घर-घर तें पकवान चलाए। निकसि गाउँ के खेरें आए ॥
ब्रजबासी तहँ जुरे अपारा। सिंधु समान न वार न पारा ॥
बड़ा चलन नहीं कोउ पावत। सकट भरे सब भोजन आवत ॥
सहस सकट चले नंद महर के। और सकट कितने घर-घर के ॥
सूरदास प्रभु महिमा-सागर। गोकुल प्रगटे हैं हरि नागर[२७] ॥

नियत स्थान पर पहुँच कर बिप्र बुलाये जाते हैं और वे 'जग्यारंभ' करते हैं।

लीन्हे बिप्र बुलाइ, जाय आरंभन कीन्हौ।
सुरपति-पूजा मेटि, भोग गोबर्धन दीन्हौ[२८] ॥

द्विज सामवेद का गान करते हैं। सुरपति की पूजा मेटकर गोबर्द्धन को तिलक लगाया जाता है। पश्चात्, उसे दूध से नहलाकर सब 'देवराज' कहते और माथ नवाते हैं—

तुरत तहाँ सब बिप्र बुलाए। जग्यारम्भ तहाँ करवाए ॥
सामवेद द्विज गान करत तहँ। देखत सुर बिथके अंबर महँ ॥
सुरपति पूजा तबहिं मिटाई। गिरि गोवर्धन तिलक चढ़ाई ॥
कान्ह कह्यौ गिरि दूध अन्हवावहु। बड़े देवता इनहिं मनावहु ॥
गोबर्धन दूधहिं अन्हवाए। देवराज कहि माथ नवाए ॥
नयौ देवता कान्ह पुजावत। नर-नारी सब देखन आवत ॥
सूर स्याम गोबर्धन थाप्यौ। इन्द्र देखि रिस करि तनु काँप्यौ[२९] ॥

दूध के अनंतर गंगाजल से भी उनको स्नान कराया जाता है। अंत में ब्रजवासी उनका भोग लगाते हैं। इसी प्रकार ठौर-ठौर पर वेदी रचकर गोबर्द्धन की बहुविधि पूजा की जाती है—

---

२७. सा० ९०१। २८. सा० ८४१।
२९. सा० ९०६।

प्रथम दूध अन्हाइ, बहुरि गंगाजल डारयौ।
बड़ौ देवता जानि, कान्ह कौ मतौ बिचारयौ॥
चहूँ ओर चक्रा धरे, चंदहि पटतर सोइ।
ठौर ठौर बेदी रची, बहु बिधि पूजा होइ।
लै सब भोजन अरपि, गोप-गोपिनि कर जोरे।
अगिनिती कीन्हे स्वाद, दास बरने कछु थोरे[३०]।

पति या सौभाग्य की कामना से स्त्रियाँ शिव का पूजन करती हैं। ब्रजबालाओं के मन में भी जब श्रीकृष्ण को पति-रूप में प्राप्त करने की कामना जन्मती है, तब वे गौरी-पति को पूजती हैं। वे बड़े नेम-धर्म से रहती और अनेक प्रकार से उनकी मनुहारि करती हैं। कमल-पुहुप, मालूर-पत्र-फल तथा नाना सुगंधित सुमनों से शिव जी की पूजा का आयोजन किया जाता है—

गौरी-पति पूजति ब्रजनारी।
नेम धर्म सौं रहति क्रिया जुत, बहुत करतिं मनुहारी॥
यहै कहतिं पति देहु उमापति गिरिधर नंद-कुमार।
सरन राखि लीजै सिवसंकर तनहिं जरावत मार॥
कमल पुहुप मालूर-पत्र-फल नाना सुमन सुबास।
महादेव पूजति मन बच करि सूरस्याम की आस[३१]॥

'सिव-संकर' जब गोपियों की कामना पूरी करते हैं और उनकी तपस्या का फल देते हैं अर्थात् जब कृष्ण उनको पति-रूप में प्राप्त हो जाते हैं, तो वे पुहुप-पान, नाना फल, मेवा आदि अर्पण करके यह कहती हुई उनके पैरों पड़ती हैं कि त्रिपुरारी! तुम्हें धन्य है। तुम्हारी पूजा करते ही हमें 'पूरन' फल प्राप्त हो गया—

सिवसंकर हमको [illegible] दीन्हौ।
पुहुप, पान, नानाफ[illegible] [illegible] कीन्हौ॥
पाइ परीं जुवतीं [illegible] यह [illegible] धन्य धन्य [illegible]पुरारी।
तुरतहि फल [illegible] हम [illegible], [illegible] सुबन [illegible]रधारी॥
विनय करतिं स[illegible] को, [illegible], कर जोरी।
सूर स्याम पति तुम तैं पायौ, यह कहि घरहिं बहोरी[३२]॥

---

३०. सा० ८४१। ३१. सा० ७६६।
३२. सा० ७६८।

पार्वती की पूजा की चर्चा सूरदास ने रुक्मिणी-विवाह के प्रसंग में की है। श्रीकृष्ण की प्राप्ति के लिए रुक्मिणी 'गौरि-मंदिर' में पूजा करने जाती है और हाथ जोड़कर उन्हें बहु विधि मनाती है—

मुदित ह्वै गई गौरि मंदिर, जोरि कर बहु बिधि मनायौ।
प्रगटि तिहिं छिन सूर के प्रभु, बाँह गहि कियौ बाम भायौ[33] ॥

साथ की सखियाँ धूप-दीप आदि पूजा-सामग्री लेकर आयी हैं। कुँअरि ने गौरी का पूजन करके बिनती की—'बर देउ जादवराई' और पूजा का उद्देश्य भी वह बहुत सरल भाव से सुना देती है—मैं पूजा कीन्ही इहिं कारन—

रुकुमिनि देवी-मंदिर आई।
धूप दीप पूजा-सामग्री अली संग सब ल्याई ॥
रखवारी कौं बहुत महाभट, दीन्हे रुकुम पठाई।
ते सब सावधान भए चहुँ दिसि, पंछी तहाँ न जाई ॥
कुँवरि पूजि गौरी बिनती करि बर देउ जादवराई।
मैं पूजा कीन्ही इहि कारन, गौरी सुनि मुसकाई[34] ॥

उसकी बात सुनकर गौरी मुसकाती हैं और रुक्मिणी प्रसाद पाकर अंबिका-मंदिर से बाहर आती है—

पाइ प्रसाद अंबिका-मंदिर, रुकमिनि बाहर आई[35] ॥

बालक कृष्ण को गोद में खिलाने का सुख भी माता यशोदा 'शिव-गौरि' की सम्मिलित कृपा से मिला समझती है—

अब हौं बलि बलि जाउँ हरी।
निसि-दिन रहति बिलोकति हरि-मुख छाँड़ि सकति नहिं एक घरी।
हौं अपने गोपाल लड़ैहौं भौन चाड़ सब रहौ भरी।
पाऊँ कहाँ खिलावनि कौ सुख, मैं दुखिया, दुख कोखि जरी।
जा सुख कौ सिव-गौरि मनाई, तिय-ब्रत-नेम अनेक करी।
सूर स्याम पाए पैंडे मैं, ज्यौं पावै निधि रंक परी[36] ॥

सूर्य की पूजा का उल्लेख यों तो 'सूरसागर' के कई पदों में है, परंतु उसकी

३३. सा० ४१८० । ३४. सा० ४१८६ ।
३५. सा० ४१८१ । ३६. सा० १०८० ।

विधि विस्तार से नहीं दी गयी है। माता यशोदा जब कृष्ण के साथ राधा को पहिली बार देखती हैं, तब इसका सुंदर रूप देखकर सविता से विनती करती हैं—

सूर महरि सविता सों बिनवति, भली स्याम की जोरी[३७]।

हरि को 'भरतार' रूप में पाने की कामना रखनेवाली गोपियाँ भी रवि से विनय करती है।

हमहिं होहु दयाल दिन-मनि, तुम बिदित संसार।
काम अति तन दहत दीजै, सूर हरि भरतार[३८]॥

जब उनकी कामना पूरी हो जाती है, तब वे पुनः हाथ जोड़कर सूर्य को 'पय-अंजलि' देती हैं, और स्वीकार करती हैं कि तुम्हारे समान फलदाता कोई नहीं है।

बिनय करतिं सविता, तुम सरि को, पय अंजलि कर जोरी।
सूर स्याम पति तुम तैं पायौ, यह कहि घरहिं बहोरी[३९]॥

अशोकवाटिका में सीता जी के सामने पहुँचकर हनुमान, लक्ष्मण को 'पालागन' कहते हैं। सीता जी तब 'तरनि सम्मुख' होकर ही उनको 'असीस' देती हैं—

लछिमन पालागन कहि पठयौ, हेत बहुत करि माता।
दई असीस तरनि-सन्मुख ह्वै, चिरजीवौ दोउ भ्राता[४०]॥

शालग्राम की पूजा नंद जी करते हैं। यमुना में स्नान करके, झारी में यमुना-जल भरकर, कंज-सुमन लेकर वे घर जाते हैं। पैर धोकर वे मंदिर में जाते हैं। उनका ध्यान प्रभु-पूजा में ही लगा है। वे स्थल लीपते, पात्र माँजते-धोते और विधिवत् पूजा करते हैं।

करि अस्नान नंद घर आए।
लै जल जमुना कौ झारी भरि, कंज सुमन बहु ल्याए।
पाइँ धोइ मंदिर पगधारे, प्रभु-पूजा जिय दीन्ह।
अस्थल लीपि, पात्र सब धोए, काज देव के कीन्हे।

---

३७. सा० ७०२। ३८. सा० ७६७-६८।
३९. सा० ७६८। ४०. सा० ९-८७।

बैठे नंद करत हरि-पूजा बिधिवत श्री बहुभाँति।
सूर स्याम खेलत तैं आए, देखत पूजा न्याति[४१] ॥

घंटा बजाकर वे देवमूर्ति को नहलाते, चंदन लगाते, पट-अंतर देकर भोग लगाते और आरती करते हैं—

नंद करत पूजा, हरि देखत।
घंट बजाइ देव अन्हवायौ, दल चंदन लै भेंटत।
पट अंतर दै भोग लगायौ, आरति करी बनाइ।
कहत कान्ह, बाबा तुम अरप्यौ, देव नहीं कछु खाइ।
चितै रहे तब नंद महरि-मुख सुनहु कान्ह की बात।
सूर स्याम देवनि कर जोरहु, कुसल रहै जिहिं गात[४२] ॥

(आ) व्रत—

'चंद्रायन' और एकादशी—दो व्रतों की चर्चा सूर ने मुख्य रूप से की है। इनमें से प्रथम का तो केवल नामोल्लेख ही है—

सहस बार जौ बेनी परसौ, चंद्रायन कीजै सौ बार[४३] ॥

द्वितीय का वर्णन विस्तार से है। अंबरीष की कथा को लेकर सूरदास एकादशी के निराहार व्रत पर अधिक जोर देते हैं—

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि चरनारबिंद उर धरौ।
हरि-पद अंबरीष चित लायौ। रिषि-सराप तैं ताहि बचायौ।
रिषिं कौं तापै फेरि पठायौ। सुक नृप कौं यौं कहि समुझायौ।
अंबरीष राजा हरि-भक्त। रहै सदा हरिपद अनुरक्त।
स्रवन-कीरतन सुमिरन करै। पद-सेवन-अरचन उर धरै।
बंदन दास पनौ सो करै। भक्तनि सख्य भाव अनुसरै।
आत्म-निवेदन सदा बिचारै। प्रेम सहित नवधा बिस्तारै।
नौमी नेम भली बिधि करै। दसमी कौं संजम बिस्तारै।

---

४१. सा० १०-२६० । ४२. सा० १०-२६१ ।
४३. सा० २-३ ।

एकादीस करै निरहार। द्वादसि पौषे लै आहार।
पतिव्रता ता नृप की नारी। अह-निसि नृप की आज्ञाकारी।
इन्द्री सुख कौं दोऊ त्यागि। धरैं सदा हरिपद अनुराग।
ऐसी बिधि हरि पूजैं सदा। हरि - हित लावैं सब संपदा।
राज-काज कछु मन नहिं धरै। चक्र सुदर्शन रच्छा करै।
घटिका दोइ द्वादसी जानि। रिषि आयौ, नृप कियौ सन्मान।
कह्यौ भोजन कीजै रिषिराइ। रिषि कह्यौ, आवत हौं मैं न्हाइ।
यह कहिकै रिषि गये अन्हान। काल बितायौ करत स्नान।
राजा कह्यौ, कहा अब कीजै। द्विजनि कह्यौ, चरनोदक लीजै।
राजा तब करि देख्यौ ज्ञान। या बिधि होइ न रिषि-अपमान।
लै चरनोदक नृप व्रत साध्यौ। ऐसी बिधि हरि कौं आराध्यौ।
इहिं अंतर दुरबासा आए। अंबरीष सौ बचन सुनाए।
सुनि राजा तेरौ व्रत टरौ। क्यौं करि तेरैं भोजन करौ।
कह्यौ नृपति, सुनियै रिषिराइ। मैं व्रत-हित यह कियौ उपाइ।
चरनोदक लै व्रत प्रतिपारयौ। अब लौं अन्न न मुख मैं डारयौ।
रिषि सक्रोध इक जटा उपारी। सो कृत्या भइ ज्वाला भारी।
जब नृप ओर दृष्टि तिहि करी। चक्र सुदरसन सो संहरी।
पुनि रिषिहू कौं जारन लाग्यौ। तब रिषि आपन जिय लै भाग्यौ।
ब्रह्म - रुद्र-लोकहूँ गयौ। उनहूँ ताहि अभय नहिं दयौ।
बहुरौ रिषि बैकुंठ सिधायौ। करि प्रनाम यह बचन सुनायौ।
मैं अपराध भक्त कौ कीनौ। चक्र सुदरसन अति दुख दीनौ।
और कहूँ मैं ठौर न पायौ। असरन - सरन जान कै आयौ।
महाराज, अब रच्छा कीजै। मोकौं जरत राखि प्रभु लीजै।
हरि जू कह्यौ, सुनौ रिषिराइ। मो पै तू राख्यौ नहिं जाइ।
तैं अपराध भक्त को कीनौ। मैं निज भक्तन कै आधीनौ।
मम-हित भक्त सकल सुख तजैं। और सकल तजि मोकौं भजैं।
बिन मम चरन न उनकैं आस। परम दयालु सदा मम दास।
उनकैं मन नाहीं सत्राइ। बातैं कहौ उनहिं सौं जाई।
तुमकौं लेहैं वेइ बचाइ। नाहीं या बिन और उपाइ।

इहाँ नृपति अतिहीं दुख छयौ। रिषि मम द्वारे तैं फिरि गयौ।
रिषि मग जोवत वर्ष बितायौ। पै भोजन तौहूँ न सिरायौ।
अंबरीष पै तब रिषि आयौ। हाथ जोरि पुनि सीस नवायौ।
रिषिहिं देखि नृप कह्यौ या भाइ। लेहु सुदरसन याहि बचाइ।
ब्राह्मन हरि हरि-भक्तनि प्यारौ। तातें अब याकौं मति जारौ।
चक्र सुदरसन सीतल भयौ। अभय-दान दुरबासा लयौ।
पुनि नृप तिहिं भोजन करवायौ। रिषि नृप सौं यह बचन सुनायौ।
मैं नहिं भक्त महातम जान्यौ। अब तैं भली भाँति पहिचान्यौ।
सुक राजा सौं ज्यौं समुझायौ। सूरदास त्यौंहीं करि गायौ।
जो यह लीला सुनै सुनावै। सो हरि-भक्ति पाइ सुख पावै[४४]।

नंद जी एकादशी का 'बिधिवत, जल-पान बिवर्जित निराहार' व्रत करते हैं। अपना मन वे सब ओर से हटाकर केवल नारायण में लगाते हैं। दिन इस प्रकार ध्यान करते बीतता है, रात में वे जागरण करते हैं। देव-मंदिर पाटंबर से छाया जाता है, पुहुपमालाओं की 'मंडली' बनायी जाती है। चंदन से स्थान लीपकर और चौक पूरकर वे शालग्राम को बैठाते हैं। पश्चात धूप-दीप-नैवेद्य चढ़ाकर वे आरती करते और माथ नवाते हैं। रात का तीसरा पहर इस प्रकार बिताकर वे महरि से पारण की विधि करने को कहते हैं। तब वे धोती-झारी लेकर जमुना-तट जाते हैं। वहाँ वे झारी भरकर 'देह-कृत' करते, माटी से कर-चरन पखारते, उत्तम बिधि से मुखारी करते और तब स्नान के लिए जल में उतरते हैं—

उत्तम सफल एकादसि आई। बिबिध व्रत कीन्हौ नँदराई॥
निराहार जल-पान बिवर्जित। पापनि रहित धर्म-फल-अर्जित॥
नारायन-हित ध्यान लगायौ। और नहीं कहुँ मन बिरमायौ॥
बासर ध्यान करत सब बीत्यौ। निसि जागरन करन मन चीत्यौ॥
पाटंबर दिवि मंदिर छायौ। पुहुप-माल मंडली बनायौ॥
देव महल चंदनहि छिपायौ। चौक देउ बैठकी बनायौ॥
सालिग्राम तहाँ बैठायौ। धूप-दीप नैवेद्य चढ़ायौ॥
आरति करि तब माथ नवायौ। ध्यान सहित मन बुद्धि उपायौ॥
आदर सहित करी नँद-पूजा। तुम तजि और न जानौं दूजा॥

---

४४. सा० ६-५।

तृतीय पहर जब रैनि गँवाई। नंद महरि सौं कही बुलाई ॥
दंड एक द्वादसी सकारैं। पारन की विधि करौ सबारैं ॥
यह कहि नंद गए जमुना-तट। लै धोती झारी बिधि-कर्मट ॥
झारी भरि जमुना-जल लीन्हौ। बाहि आइ देह कृत कीन्हौं ॥
लै माटी कर चरन पखारी। उत्तम बिधि सौं करी मुखारी[४५] ॥

आगे नंद जी का वरुण के दूतों द्वारा पकड़ा जाना और श्रीकृष्ण द्वारा मुक्त होना वर्णित है। अंत में कवि कहता है—

जो या पद कौ सुनै सुनावै। एकादसि ब्रत कौ फल पावै[४६] ।

(६) स्नान—

शारीरिक स्वच्छता की दृष्टि से स्नान को भी हमारे यहाँ धर्म का एक अंग माना गया है। विशेष स्थानों और अवसरों पर स्नान का विशेष महत्व भी सूरदास ने बताया है। गंगा में स्नान का माहात्म्य बताते हुए कवि कहता है—

गंग प्रवाह माहिं जो न्हाइ। सो पवित्र ह्वै हरिपुर जाइ[४७] ।

इसी प्रकार सूर्य-ग्रहण के अवसर पर कुरुक्षेत्र-स्नान का महत्व बताते हुए श्रीकृष्ण यादवों से कहते हैं—

बड़ौ परब रबि-ग्रहन कहा, कहौं तासु बड़ाई।
चलौ सकल कुरुखेत, तहाँ मिलि न्हैयै जाई[४८] ।

गंगा, यमुना, सिंधु, सरस्वती, गोदावरी आदि नदियों में स्नान की विशेष महिमा है ; परंतु सूरदास की सम्मति में ये सब नदियाँ वहाँ आ जाती हैं, जहाँ हरि-कथा होती है—

हरि हरि, हरि हरि, सुमिरन करौ। हरि चरनारविंद उर धरौ।
हरि की कथा होइ जब जहाँ। गंगा हू चलि आवै तहाँ।
जमुना सिंधु सरस्वति आवै। गोदावरी बिलंब न लावै।
सर्व तीर्थ को बासा तहाँ। सूर हरि-कथा होवै जहाँ[४९] ।

---

४५. सा० ९८४। ४६. सा० ९८४।
४७. सा० ९-९। ४८. सा० ४२७५।
४९. सा० १-२२४।

(ई) दान—

दान के विविध रूपों का वर्णन 'सूरसागर' में है। आनंदोत्सवों के दान की चर्चा तो आगे की जायगी, यहाँ विपत्ति से छुटकारा पाने पर कृतज्ञता-स्वरूप दिये गये दान का एक उदाहरण दिया जाता है। यमुना में स्नान करते समय नंद जी को वरुण के दूत पकड़ जाते हैं। श्रीकृष्ण वहाँ से उन्हें छुड़ा लाते हैं। तब यशोदा कहती है—

अब तौ कुसल परी पुन्यनि तैं, द्विजनि करौ कछु दान[५०]।

(उ) तीर्थयात्रा—

कुरुक्षेत्र, केदार, गया, नीमसार, बनारस, बारानसी, बेनी आदि तीर्थ स्थानों की चर्चा सूरदास ने की है—

ब्रज बासिनि कौ हेत, हृदय मैं राखि मुरारी।
सब जादव सौं कह्यौ, बैठि कै सभा मँझारी॥
बड़ौ परब रवि-ग्रहन, कहा कहौं तासु बड़ाई।
चलौ सकल कुरुखेत, तहाँ मिलि न्हैये जाई।
तात, मात निज नारि लिए, हरि जू सब संगा।
चले नगर के लोग, साजि रथ तरल तुरंगा।
कुरुच्छेत्र मैं आइ, दियौ इक दूत पठाई।
नंद जसोमति गोपि ग्वाल सब सूर बुलाई[५१]॥

× × ×

अस्वमेध जग्य जो कीजै, गया, बनारस अरु केदार[५२]।

× × ×

अस्वमेध जग्य जो कीजै, गया, बनारस अरु केदार[५३]।

× × ×

जो पुनि नीमसार मैं आयौ। तहाँ रिषिनि को दरसन पायौ[५४]।

---

५०. सा० ९८५। ५१. सा० ४२७५।
५२. सा० २-३। ५३. सा० २-३।
५४. सा० १-२२८।

× × ×

अस्वमेध जग्यहु, जो कीजै, गया, बनारस अरु केदार[५५]।

× × ×

बन बारानसि मुक्तिक्षेत्र है, चलि तोकौं दिखराऊँ[५६]।

× × ×

सहस बार जो बेनी परसौ, चन्द्रायन कीजै सौ बार[५७]।

और ब्रज को तो परम तीर्थ उन्होंने माना ही है जिसकी परिक्रमा करने का आदेश श्रीकृष्ण ने ब्रह्मा को दिया है—

ब्रज परिक्रमा करहु देह कौ पाप नसावहु[५८]।

परंतु सूरदास की दृष्टि में तीर्थों में स्नान आदि का महत्व गोपाल की लीला का गान करने के सामने कुछ नहीं है—

जो सुख होत गुपालहिं गाएँ
सो सुख होत न जप तप कीन्हैं, कोटिक तीरथ न्हाए[५९]।

इसी प्रकार सामान्य व्यक्ति की दृष्टि में तीर्थ-यात्रा का जो कुछ भी महत्व हो, भक्त कवि सूरदास की सम्मति में तो जहाँ हरि-कथा हो, वहीं सब तीर्थ होते हैं—

सर्व तीर्थ कौ बासा तहाँ। सूर हरि कथा होवै जहाँ[६०]।

(ऊ) तप—

श्रीकृष्ण को पति-रूप में प्राप्त करने की कामना रखनेवाली गोपियाँ नियमादि की साधना करती और संयमित जीवन बिताती हैं। उनका 'तप' छहों ऋतुओं में चलता रहता है। वे न 'सीत से भीति' करती हैं और न उन्हें भूख-प्यास की ही चिंता है। गेह-नेह सबको बिसारकर निरंतर तप में लगे रहने से वे बहुत 'कृस' हो जाती हैं—

---

५५. सा० २-३। ५६. सा० १-४०३।
५७. सा० २-३। ५८. सा० ४६२।
५९. सा० २-६। ६०. सा० १-२२४।

सिव सौं बिनय करति सुकुमारि ।
जोरि कर, मुख करति अस्तुति, बड़े प्रभु त्रिपुरारि ॥
सीत भीत न करतिं सुंदरि, कृस भई सुकुमारि ।
छहौं रितु तप करतिं नीकैं, गेह-नेह बिसारि ॥
ध्यान धरि, कर जोरि, लोचन मूँदि, इक इक जाम ।
बिनय अंचल छोरि रवि सौं, करतिं हैं सब बाम ॥
हमहिं होहु दयाल दिन-मनि, तुम बिदित संसार ।
काम अति तनु दहत दीजै सूर हरि भरतार[६१] ।

छहों ऋतुओं में वे 'त्रिविध काल' स्नान करती हैं, नेम से रहती हैं और 'चतुर्दस निसि' भोग रहित रहकर जागती हैं। मनसा, बाचा और कर्म से वे श्याम का ही ध्यान करती हैं—

ब्रज बनिता रबि कौं कर जोरैं ।
सीत-भीत नहि करति छहौं रितु, त्रिबिध काल जल खोरैं ।
गौरीपति पूजतिं, तप साधतिं, करत रहतिं नित नेम ॥
भोग रहित निसि जागि चतुर्दसि, जसुमति-सुत कैं प्रेम ॥
हमें देहु कृष्न पति ईस्वर, और नहीं मन आन ।
मनसा बाचा कर्म हमारैं, सूर स्याम कौ ध्यान[६२] ॥

(ए) अन्य—

उक्त विषयों के अतिरिक्त समस्त मंगलकार्यों में कुलदेव अथवा प्रमुख देवी-देवताओं का स्मरण भी व्रजवासियों की धर्म-भावना का ही द्योतक है। यहाँ तक कि 'सोहिलो' के प्रथम चरण में ही गोरी, गनेस्वर और देवी सारदा से बिनती की जाती है—

गौरि गनेस्वर बीनऊँ (हो), देवी सारद तोहिं ।
गावौं हरि कौ सोहिलौ (हो) मन आखर दै मोहिं[६३] ।

---

६१. सा० ७६७ । ६२. सा० ७८२ ।
६३. सा० १०-४० ।

'सराध' को भी एक धर्म-कर्म माना गया है जिसके न करने से धर्म की हानि होती है—

दया, धर्म, संतोषहु गयौ। ज्ञान, छमादिक सब लय भयौ।
जज्ञ, सराध न कोऊ करै। कोऊ धर्म न मन मैं धरै[६४]।

६४. छा० १-२६०।

सामान्य विश्वास

जन-मनोवृत्ति के पारखी सूरदास ने अपने समकालीन समाज के अनेक ऐसे विश्वासों का उल्लेख अपने काव्य में किया है जो आज भी साधारणतः मान्य हैं। ऐसे विश्वासों को शकुन-अशकुन, स्वप्न, कवि-प्रसिद्धि और अन्य विश्वास—इन चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

(अ) शकुन-अशकुन—

साहित्य में शकुन का वर्णन मुख्यतः शुभ सूचनाओं का पूर्वाभास कराने के उद्देश्य से होता है। किसी शुभ संवाद के ज्ञात होने के पूर्व शकुनों से पाठक की उत्सुकता बढ़ती है। सूर-काव्य में भी शकुनों का उल्लेख इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हुआ है। कौए का बोलना, मृगमाला का दाहिनी ओर दिखायी देना, पुरुषों के दाहने और स्त्रियों के बायें अंग फड़कना आदि शकुनों की चर्चा सूर-काव्य में की गयी है।

'सूरसागर' के नवें स्कंध में अशोकवाटिका में बैठी सीता जी जब पति और देवर के लिए चिंतित हो रही हैं, तभी उनके 'नयन-उर' फड़कने लगे और 'सगुन जनायौ अंग'। इससे उन्हें विश्वास हो जाता है—

आज लहौं रघुनाथ-संदेसौ, मिटै बिरह-दुख संग[६५]।

और तभी हनुमान वहाँ प्रकट होकर सीता जी को पति और देवर का कुशल-समाचार एवं संदेश देते हैं।

वनवास की अवधि समाप्त होने पर माता कौशल्या जब पुत्रों से मिलने के

६५. सा० ६-८३।

लिए 'सगुनौती' करती हैं, तभी 'सुकाग' उड़कर 'हरी डार' पर बैठ जाता है। माता आश्वस्त हो जाती है और अंचल में गाँठ देकर प्रसन्न हृदय से कौए को 'दधि-ओदन' देने और उसकी चोंच तथा पंखों को सोने के पानी से मढ़ाने की बात कहती है—

बैठी जननि करति सगुनौती।
लछिमन-राम मिलैं अब मोकों, दोउ अमोलक मोती।
इतनी कहत, सुकाग उहाँ तैं हरी डार उड़ि बैठ्यौ।
अंचल गाँठि दई, दुख भाज्यौ, सुख जु आनि उर पैठ्यौ।
जब लौं हौं जीवौं जीवन भर, सदा नाम तव जपिहौं।
दधि - ओदन दोना भरि दैहौं, अरु भाइनि मैं थपिहौं।
अब कैं जो परचौ करि पावौं अरु देखौं भरि आँखि।
सूरदास सोने कैं पानी मढ़ौं चोंच अरु पाँखि[१६]।

एक विरहिणी गोपी के आँगन में कौए को बोलता सुनकर दूसरी उसे सांत्वना देती है—

तेरैं आवैंगे आजु सखी, हरि खेलन कौं फाग री।
सगुन सँदेसौ हौं सुन्यौ, तेरैं आँगन बोलै काग री[१७]।

कंस ने सुफलक-सुत अक्रूर को यह आदेश देकर गोकुल भेजा कि जाकर बलराम और कृष्ण को मथुरा लिवा लाओ। चित्त में बहुत दुखी होते, कंस को भरपेट कोसते और दोनों भाइयों की खैर मनाते हुए अक्रूर गोकुल की ओर चले—

सुफलक-सुत मन पर्‌यौ बिचार। कंस निर्वंस होय हत्यार।
नगर माँझ रथ कीन्हौ ठाढ़ौ। सोच पर्‌यौ मन में अति गाढ़ौ॥
मंत्र कियौ निसि मेरैं साथ। मोहि लेन पठयौ ब्रजनाथ॥
गज, मुष्टिक, चानूर निहार्‌यौ। व्याकुल नैन नीर दोउ ढार्‌यौ॥
अति बालक बलराम कन्हाई। कैसैं आनि देउँ मैं माई॥
कहा करौं नहि कछु बसाई। मो देखत मारे दोउ भाई॥
मारे मोहि बंदि लै मेलै। आगे कौ रथ नैंकु न ठेलै[१८]॥

---

१६. सा० ६-१६४। १७. सा० २८५६।
१८. सा० २६४१।

रथ हाँकते ही उन्हें दाहिनी ओर 'मृगमाला' के दर्शन हुए। इस शुभ शकुन से वे अत्यंत प्रसन्न और पूर्ण आश्वस्त हो गये—

दाहिनैं देखियत मृग-माल।

मानौ इहिं सकुन अबहिं इहिं बन आजु, इनहिं भुजनि भरि भेटैंगो गोपाल[६९]।

श्रीकृष्ण के कहने से ब्रजवासियों को धैर्य देने के लिए उद्धव गोकुल जाते हैं। अभी वे मधुबन से चले ही हैं कि गोपियों को इसका आभास हो जाता है और इसका कारण हैं दो शकुन। पहला, उनके कान के पास आकर एक भौंरा बार-बार गूँजता या गाता है। दूसरा, छत पर बैठे हुए कौओं को जब वे, 'हरि आ रहे हैं ?' कहकर उड़ाती हैं, तब तो वे उड़ते नहीं; परंतु जब 'हरि का समाचार मिलेगा' ? कहकर उड़ाती हैं, तब वे तुरंत उड़ जाते हैं। इससे वे निष्कर्ष निकालती हैं—

सखी परस्पर यह कही बातैं, आजु स्याम के आवत हैं।

किधौं सूर कोऊ ब्रज पठयौ, आजु खबरि कै पावत हैं[७०]।

\+ + +

इनि सगुननि कौ यहै भरोसौ, नैननि दरस दिखावैं[७१]।

\+ + +

आजु कोउ नीकी बात सुनावै।

कै मधुबन तैं नंद-लाड़िलौ, कैऽब दूत कोउ आवै[७२]।

कुरुक्षेत्र तीर्थ में ग्रहण-स्नान के लिए पहुँचकर श्रीकृष्ण [illegible] ब्र[illegible] [illegible]ो भी वहीं बुला लाने को दूत भेजते हैं, तब गोपियों को अनेक शकुन होते हैं; जैसे—बायस का गहगहाकर पूर्व दिसि में बोलना, कुच-भुज-नैन-अधर फड़कना और बिना वात के 'अंचल-ध्वज का डोलना'। इन सब शकुनों का फल सुनाती हुई सखी कहती है—

आजु मिलावा होइ स्याम कौ, मानौ सुनि सखी राधिका भोली।

\+ + +

सोच निवारि करौ मन आनँद, मानौ भाग दसा बिधि खोली[७३]।

---

६९. सा० २६४६। ७०. सा० ३४५३।
७१. सा० ३४५४। ७२. सा० ३४५५।
७३. सा० ४२७६।

वर्षों के बिछुड़े मित्र श्रीकृष्ण से मिलने को जाते हुए सुदामा जी मार्ग में चिंतित हैं कि वे मिलेंगे या नहीं और मिलेंगे तो कैसे ; तभी भले 'सगुन' होते हैं और द्वारका पहुँचते ही वे 'हरि को दरसन' पा लेते हैं—

सुदामा सोचत पंथ चले।
कैसें करि मिलिहैं मोहि श्रीपति, भए तब सगुन भले।
पहुँच्यौ जाइ राजद्वारे पर काहूँ नहिं अटकायौ।
इत उत चितै धँस्यौ मंदिर मैं, हरि कौ दरसन पायौ।
मन मैं अति आनन्द कियौ हरि, बाल-मीत पहिचान।
धाए मिलन नगन पद आतुर, सूरज-प्रभु भगवान[७४]।

किसी अनिष्ट की प्रत्यक्ष सूचना मिलने के पूर्व अशकुनों द्वारा उसका आभास कराया जाता है। ऐसा करने से यद्यपि अशुभ संवाद से मिलनेवाला दुख किसी प्रकार कम नहीं होता, तथापि ये अशकुन उस दुख को सहन करने के लिए कुछ वातावरण तो तैयार कर ही देते हैं। सूरदास की अशकुन-योजना का भी यही उद्देश्य निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट होता है।

कालीदह के फूल मँगवाने के लिए कंस एक दूत नंद जी के पास भेजता है और कहला देता है, फूल न भेजने पर व्रज को उजाड़ दूँगा—

पाती बाँचत नंद डराने।
कालीदह के फूल पठावहु सुनि सबही घबराने।
जो मोकौं नहि फूल पठावहु, तौ ब्रज देहुँ उजारि।
महर, गोप, उपनंद न राखौं, सबहिन डारौं मारि।
पुहुप देहु तौ बनै तुम्हारी, नातरु गए बिलाइ।
सूरस्याम-बलराम तिहारे, मागौं उनहिं धराइ[७५]।

स्थिति भयानक है; क्योंकि यह सर्वविदित है कि फूल लेने जानेवाला वहाँ से जीवित नहीं लौट सकता और यदि फूल न भेजे गये तो कंस न जाने क्या कुदशा कर डालेगा। इसीलिए दूत के वृंदावन पहुँचने के पूर्व ही नंद जी को एक अशकुन द्वारा परोक्ष सूचना मिल जाती है कि कोई भयानक विपत्ति आनेवाली है—

---

७४. सा० ४२२७। ७५. सा० ५२६।

महर पैठत सदन भीतर, छींक बाईं धार।
सूर नंद कहत महरि सौं, आजु कहा बिचार[७६]।

काली-दह के फूलों के लिए पिता को चिंतित देखकर कृष्ण वहाँ जाने का निश्चय करते हैं और श्रीदामा की गेंद लाने के बहाने दह में भहराकर कूद पड़ते हैं—

रिस करि लीन्हीं फेंट छुड़ाइ।
सखा सबै देखत हैं ठाढ़े, आपुन चढ़े कदम पर धाइ।
तारी दै-दै हँसत सबै मिलि, स्याम गए तुम भाजि डराइ।
रोवत चले श्रीदामा घर कौं, जसुमति आगैं कहिहौं जाइ।
सखा-सखा कहि स्याम पुकार्यौ, गेंद आपनो लेहु न आइ।
सूर स्याम पीतांबर काछे, कूदि परे दह में भहराइ[७७]।

साधारण व्यक्ति उस दह से बचकर नहीं आ सकता; इस कारण कृष्ण के जीवन के लिए आशंकित होकर सब सखा हाय-हाय कर रोने लगते हैं। माता यशोदा उस समय घर पर हैं। तभी निम्नलिखित अशकुन माता यशोदा को इस दुर्घटना की पूर्व सूचना-सी दे देते हैं—

जसुमति चली रसोई भीतर, तबहि ग्वालि इक छींकी।
ठठकि रही द्वारे पर ठाढ़ी, बात नहीं कछु नीकी।
आइ अजिर निकसी नँदरानी, बहुरी दोष मिटाइ।
मंजारी आगें ह्वै आई, पुनि फिरि आँगन आई।
व्याकुल भई, निकसि गई बाहिर, कहँ धौं गए कन्हाई।
बाएँ काग, दाहिनैं खर-स्वर, व्याकुल घर फिरि आई[७८]।

नंद जी इस समय बाहर थे। उन्होंने ज्यों ही घर में पैर रखा त्योंही उन्हें भी अनेक अशकुनों ने चिंतित कर दिया—

देखे नंद चले घर आवत।
पैठत पौरि छींक भई बाएँ, दाहिन धाह सुनावत।
फटकत स्रवन स्वान द्वारे पर, गररी करति लराई।
माथे पर ह्वै काग उड़ान्यौ, कुसगुन बहुतक पाई[७९]।

---

७६. सा० २४। ७७. सा० ५३६।
७८. सा० ५४०। ७९. सा० ५४१।

महाभारत के अंत में द्वारका जाने पर अर्जुन को कृष्ण सहित समस्त यादवों के क्षय होने की सूचना मिलती है। यह दारुण समाचार सुनकर वे पछाड़ खाकर गिर पड़ते हैं। दारुक के बहुत समझाने-बुझाने पर और श्रीकृष्ण का संदेश सुनाने पर अर्जुन अपने साथ अनाथ यादव नर-नारियों को लेकर लौटते हैं। मार्ग में भीलों से लड़ाई होती है और ये खूब लूटमार करते हैं। युधिष्ठिर आदि तक ये सब कुसंवाद नहीं पहुँचे हैं, परंतु निम्नलिखित अशकुन किसी अनिष्टकारी दुर्घटना की आशंका से उन्हें चिंतित कर देते हैं--

रोवैं वृषभ, तुरग अरु नाग। स्यार द्यौस, निसि बोलैं काग।
कँपै भुव, बर्षा नहिं होइ। भयौ सोच नृप-चित यह जोइ[८०]।

(आ) स्वप्न—

सूरदास का समकालीन जन-समाज स्वप्नों को भी सर्वथा असत्य या निरर्थक नहीं समझता। अशोकबाटिका में सीता जी बहुत दुखी हो रही हैं तथा हरण की घड़ी से अब तक पति और देवर की कोई सूचना न मिलने से बहुत चिंतित हैं, तभी त्रिजटा आकर रावण की दुर्दशा के उस दृश्य का वर्णन करती है, जो उसने स्वप्न में देखा था। अंत में वह बड़े विश्वास के साथ कहती है—

या सपने कौ भाव सिया, सुनि कबहुँ बिफल नहिं जाइ[८१]।

स्वप्न द्वारा भावी कार्यों की सूचना से संबंधित पात्र संकेतित या संभावित घटना के विषय में कुछ देर सोचने के लिए विवश हो जाते हैं। आगे चलकर जब वह दृश्य सत्य या प्रत्यक्ष हो जाता है, तब पात्र-पात्री को पूर्व 'स्वप्न' का तुरंत स्मरण हो आता है। कालीदह में कूदने के पूर्व श्रीकृष्ण सोते से झझक पड़ते हैं और पूछने पर माता से कहते हैं—

सपनैं कूदि पर्‌यौ जमुना-दह, काहूँ दियौ गिराइ[८२]।

दूसरे दिन जब वे सत्य ही कालीदह में कूद पड़ते हैं और रोते-पीटते हुए सखा आकर सूचना देते हैं, तब माता कहती है—

---

८०. सा० १-२८६। ८१. सा० ९-८३।
८२. सा० ५१७।

सपनौ परगट कियौ कन्हाई।

सोवत ही निसि आजु डराने, हमसौं कहि यह बात सुनाई[८३]।

स्वप्न में यदि कोई देवता कुछ करने का आदेश दे तो साधारणः धर्मभीरु समाज उसके अनुसार काम अवश्य करता है। इंद्र की पूजा के आयोजन की सूचना जब सात बरस के बालक कृष्ण को मिलती है, तब वह पिता नंद तथा अन्य उपस्थित गोपों से स्वप्न में 'गोवर्धनराज' के दर्शन होने और उनकी पूजा का आदेश दिये जाने की बात कहता है। यह सुनकर समस्त गोप इंद्र की पूजा छोड़कर गोवर्धन पूजने को तैयार हो जाते हैं—

नंद कह्यौ घर जाहु कन्हाई।
ऐसे मैं तुम जाहु कहूँ जनि, अहो महरि सुत, लेहु बुलाई॥
सोइ रह्यौ मेरी पलिका पर, कहति महरि हरि सौं समुझाई।
बरष दिवस कौ महा महोच्छव, को आवै धौं कौन सुभाई॥
और महर-ढिग स्याम बैठि कै, कीन्हौ एक बिचार बनाई।
सुपनैं आजु मिल्यौ मोकौं इक बड़ौ पुरुष अवतार जनाई॥
कहन लग्यौ मोसौं ये बातैं, पूजत हौ तुम काहि मनाई।
गिरि गोबर्धन देवनि कौ मनि, सेवहु ताकौं भोग चढ़ाई॥
भोजन करै सबनि के आगैं, कहत स्याम यह मन उपजाई।
सूरदास प्रभु गोपनि आगे, यह लीला कहि प्रगट सुनाई[८४]॥

× × × ×

मेरौ कह्यौ सत्य करि जानौ।
जौ चाहौ ब्रज की कुसलाई, तौ गोबर्धन मानौ॥
दूध दही तुम कितनौ लैहौ, गोसुत बढ़ैं अनेक।
कहा पूजि सुरपति सौं पायौ, छाँड़ि देहु यह टेक॥
मुँह माँगे फल जौ तुम पावहु, तौ तुम मानहु मोहिं।
सूरदास प्रभु कहत ग्वाल सौं, सत्य बचन करि दोहि[८५]॥

× × × ×

---

८३. सा० ५४४। ८४. सा० ८१६।
८५. सा० ८२१।

गोबर्धन पूजहु जाइ।
मधु-मेवा-पकवान-मिठाई, व्यंजन बहुत बनाइ ॥
इहिं पर्वत तृन ललित मनोहर, सदा चरें सुख गाइ।
कान्ह कहै सोइ कीजियै मैया, मघवा जाइ रिसाइ ॥
भरि भरि सकट चले गिरि सन्मुख, अपनें अपनें चाइ।
सूरदास प्रभु आपुन भोगी, धरि स्वरूप गिरि राइ[८६] ॥

सूर-काव्य में उन्हीं स्वप्नों को सत्य होता दिखाया गया है जो अकस्मात उस व्यक्ति के संबंध में दिखायी देते हैं जिसका उस दिन जरा भी ध्यान न हो। इसके विपरीत, कारण-विशेष से जिस संबंधी या प्रिय व्यक्ति का निरंतर ध्यान किया जा रहा हो, वह यदि स्वप्न में दिखायी दे, तब संबंधित दृश्य या घटना के सत्य होने की संभावना पर किसी को विश्वास नहीं होता। श्रीकृष्ण के मथुरा चले जाने पर दिन-रात उनका ध्यान करनेवाली वियोगिनी गोपियों को पहले तो नींद ही नहीं आती कि स्वप्न दिखायी दें, पर यदि जरा देर को वे सो जाती हैं और प्रियतम के मिलन का कोई दृश्य उन्हें दिखायी देता है तब कभी तो कोयल कूक कर उन्हें जगा देती है—

इतनी दूरि गोपालहिं माई, नहिं कबहूँ मिलि आई।
कहिए कहा, दोष कहिं दीजै, अपनी हीं जड़ताई ॥
सोवत मैं सपनें सुनि सजनी ज्यौं निधनी निधि पाई।
गनतहि आनि अचानक कोकिल, उपवन बोलि जगाई।
जो जागी तौ कह उठि देखौं बिकल भई अधिकाई।
नूतन किसलय कुसुम दसहु दिसि, मधुकर मदन दुहाई।
बिछुरत तन न तज्यौ तेही छन, संग न गई हठि माई।
समुझि न परी सूर तिहिं अवसर, कीन्हीं प्रीति हँसाई[८७]।

कभी वह स्वयं चौंककर उठ बैठती हैं—

मैं जान्यो री आए हैं हरि, चौंकि परे तें पुनि पछितानी।
इते मान तलफत तन बहुतै, जैसैं मीन तपति बिनु पानी।

---

८६. सा० ८२५।   ८७. सा० ३२५६।

ससि सुदेह तौ जरति बिरह-जुर, जतननि नहिं प्रकृती है आनी
कहाँ करौं अब अपथ भए मिलि, बाढ़ी बिथा दुःख दुहरानी।
पठवौं पथिक सब समाचार लिखि, बिपति बिरह वपु अति अकुलानी
सूरदास-प्रभु तुम्हरे दरस बिनु, कैसैं घटति कठिन यह कानी[८८]।

× × ×

बहुरौ भूलि न आँखि लगी।
सपनैंहू के सुख न सहि सकी, नींद जगाइ भगी।
बहुत प्रकार निमेष लगाए, छुटी नहीं सटगी।
जनु हीरा हरि लियौ हाथ तैं, ढोल बजाइ ठगी।
कर मींड़ति पछताति बिचारति, इहिंबिधि निसा जगी।
वह मूरति वह सुख दिखरावै, सोई सूर सगी[८९]।

और कभी स्वप्न में प्रिय-संयोग-सुख से पुलकित होने के कारण जाग जाती हैं। ऐसे अवसरों पर वियोग-जन्य वास्तविक स्थिति उन्हें और भी विकल कर देती है—

अब ह्याँ हेत है नहीं।
जहँ वह स्याम मदन मूरति, चलि मोहिं लिवाइ तहीं।
कुटिल अलक, मकराकृत कुंडल, सुंदर नैन बिसाल।
अरुन अधर, नासिका मनोहर, तिलक तरनि ससि भाल॥
दसन ज्योति दामिनि ज्यौं दमकति, बोलत बचन रसाल।
उर बिचित्र बनमाल बनी ज्यौं, कंचन लता तमाल॥
घन तन पीत बसन सोभित अति, जनु अलि कमल पराग।
बिपुल बाहु भरि कृत परिरंभन, मनहु मलय- द्रुम नाग॥
सोवत ही सुपने मैं अति सुख, सत्य जानि जिय जागी।
सूरदास प्रभु प्रगट मिलन कौं, चातक ज्यौं रट लागी[९०]॥

× × ×

सुपनैं हरि आए हौं किलकी।
नींद जु सौति भई रिपु हमकौं, सइ न सकी रति तिल की।

---

८८. सा० ३२६२। ८९. सा० ३२६५।
९०. सा० ३२६०।

जो जागौं तौ कोऊ नाहीं, रोके रहति न हिलकी।
तन फिरि जरनि भई नख सिख तैं, दिया बाति जनु मिलकी।
पहिली दसा पलटि लीन्ही है, त्वचा तचकि तनु पिलकी।
अब कैसैं सहि जात हमारी भई सूर गति सिलकी[९१] ॥

(इ) कवि-प्रसिद्धि—

कुछ बातें समाज में ऐसी प्रचलित होती हैं जिनकी सत्यता-असत्यता की परख करने की आवश्यकता न समझकर कवि-वर्ग उनको ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेता है। सूर-काव्य में ऐसी जो कवि-प्रसिद्धियाँ मिलती हैं, उनमें चकवा चकवी या चकई का सरोवर या जलाशय के निकट रहना और रात में दोनों का वियोग हो जाना, चकोर या चकोरी का चंद्रमा की ओर देखना अर्थात् चंद्रिका का पान करना, चातक या चातकी का बरषा (स्वाती) जल के लिए प्यासा होना, हंस का मुक्ताफल-भोगी होना आदि प्रमुख हैं —

चकई री, चलि चरन सरोवर, जहाँ न प्रेम-बियोग
हँज भ्रम-निसा होति नहिं कबहूँ, सोइ सायर सुख जोग[९२]।

× × ×

सुत-सनेहि-तिय सकल कुटुम्ब मिलि, निसि-दिन होति खई।
पद - नख - चंद चकोर बिमुख मन, खात अँगार मई[९३]।

× × ×

जैसें मगन नाद-रस सारँग, बधत बधिक बिन बान।
ज्यौं चितवत ससि ओर चकोरी, देखत ही सुख मान[९४]।

× × ×

लेत बलाइ करत न्यौछावरि, बलि भुज दंड कितक अरि ग्रासी।
नर नारिन के नैन निरखि भए, चातकि रितु बरसा की प्यासी[९५] ॥

× × ×

---

९१. सा० ३२६१। ९२. सा० १-३३७।
९३. सा० १-२६६। ९४. सा० १-१६६।
९५. सा० ४१८४।

साँची बात छाँड़ि अलि तेरी, झूठी को अब सुनिहै ।
सूरदास मुक्ताफल भोगी, हंस ज्वारि क्यों चुनिहै[६६] ॥

इसी प्रकार युद्ध में वीरता से लड़कर मरने-वाले वीरों का सूर्यलोक होते हुए स्वर्ग जाना भी कवि-वर्ग में प्रसिद्ध रहा है—

सुभट मरै तौ मंडल भेदि भानु कौ, सुरपुर जाइ बसावै[६७] ।

(ई) कुछ अन्य विश्वास—

सूर-काव्य में जन-समाज, विशेषतः स्त्री-समाज, के कुछ ऐसे विश्वासों की भी चर्चा है, जो आज भी सर्वथा लुप्त नहीं हुए हैं। इनमें से मुख्य मुख्य ही यहाँ संकलित हैं।

बच्चे के ऊपर रुपया, पैसा, गहना आदि निछावर करने के मूल में स्त्रियों का यह विश्वास है कि इससे बच्चे के भावी रोग-धोग और कष्ट-संकट दूर हो जाते हैं। इसलिए श्रीकृष्ण की तृणावर्त से रक्षा होने पर जब गोपियाँ 'अभूषन वारि वारि' देती हैं, तब उनके हृदय में उक्त भाव ही हिलोरें लेता है। बच्चे के ऊपर से 'पानी उतार कर पीने' के मूल में भी ऐसा ही विश्वास है कि इससे उसकी विपत्ति टल जाती है। कभी कभी दैवी एवं मानवीय आपत्तियों से रक्षा होने पर 'पीवति सूर वारि सब (= गोपियाँ) पानी'—

तृनावर्त की सुरति आनि जिय, पठयौ असुर कंस अभिमानी ।
गरू भए महिं मैं बैठाए, महि न सकी जननी अकुलानी ।
आपुन गई भवन मैं दौरी, कछु इक काज रही लपटानी ।
बौंडर महा भयानक आयौ, गोकुल भयौ प्रलय करि मानौ ।
महातुष्ट लै उड़यौ गुपालहिं, चल्यौ अकास कृष्न,यह जानी ।
चापि ग्रीव हरि प्रान हरे, हग-रकत-प्रवाह चल्यौ अधिकानी ।
पाहन सिला निरखि हरि डार्यौ, ऊपर खेलत स्याम बिनानी ।
ब्रज-जुवतिनि उपबन मैं पाए, लयौ उठाइ कण्ठ लपटानी ।
लै आई गृह चूमति-चाटति, घर-घर सबनि बधाई मानी ।
देतिं अभूषन वारि-वारि सब, पीवतिं सूर वारि सब पानी[६८] ।

---

६६. सा० ३५२६ । ६७. सा० ६-१५२ ।
६८. सा० १०-७८ ।

विशेष अवसरों पर पुत्र के संकट अपने ऊपर लेने की कामना रखनेवाली माता भी ऐसा ही करती है। असाधारण सुंदरी रुक्मिणी से जब श्रीकृष्ण का विवाह होता है, तब उनकी मनोहर जोड़ी देखकर माता देवकी 'वारकर पानी पीती और असीस देती' है—

देवकी पियो वारि पानी, दै असीस निहारती[९९]।

बच्चा जब कोई असंभावित या अद्भुत कार्य कर देता है, माता-पिता तथा अन्य गुरुजन आशंकित होकर उस पर किसी अपदेवता की छाया मान लेते हैं और 'सयानों' से 'हाथ दिखाते' घूमते हैं जिससे वह पुनः सामान्य स्थिति में आ जाय। बालक कृष्ण के मुख में तीनों लोकों को और पुत्र के साथ अपने को भी देखकर माता यशोदा बहुत चकित और आतंकित होकर घर-घर 'हाथ-दिखाती' घूमती है—

घर घर हाथ दिखावति डोलति, बाँधति गरें बघनियाँ[१]।

बालक कृष्ण जब कुछ अनमना हो जाता है, तब माता यशोदा यह समझकर कि कहीं 'नजर' न लग गयी हो, पागल-सी उसे गोद में लिए 'घर घर हाथ दिखावति' डोलती है—

देखौ री जसुमति बौरानी।
घर-घर हाथ दिखावति डोलति, गोद लिए गोपाल बिनानी।
जानत नाहिं जगतगुरु माधौ, इहिं आए आपदा नसानी।
जाकौ नाउँ सक्ति पुनि जाकी, ताकौं देत मंत्र पढ़ि पानी।
अखिल ब्रह्मण्ड उदर गत जाकैं, जाकी जोति जल-थलहिं समानी
सूर सकल साँची मोहिं लागति, जो कछु कही गर्ग मुख बानी[२]।

इसी प्रकार 'नजर' का प्रभाव दूर करने के लिए कभी तो यशोदा 'राई-लोन' उतारती है और कभी 'मंत्र पढ़कर' पानी देती है—

देखौ री जसुमति बौरानी।
घर-घर हाथ दिखावति डोलति, गोद लिए गोपाल बिनानी।

---

९९. सा० ४१८६। १. सा० १०-८३।
२. सा० १०-२५८।

जानत नाहिं जगतगुरु माधौ, इहिं आए आपदा नमानी।
जाकौ नाउँ सक्ति पुनि जाकी, ताकौ देत मंत्र पढ़ि पानी[3]।

राधा को अनमनी देखकर वृषभानु की घरनी भी 'टटकी नज़रि' लगने की शंका करती है—

कान्हहिं पटै, महरि कौं कहति है पाइनि परि।
आजु कहूँ कारैं उहिं, खाई है काम-कुँवरि॥
सब दिन आवै सु जाइ, जहाँ-तहाँ फेरि फिरि।
अबहीं खरिक गई आइ रही है जिय बिसरि॥
निसि के उनींदे नैन, तैसे रहे ढरि ढरि।
कीधौं कहुँ प्यारी कौं, लागी टटकी नजरि[4]।

जब माता को पता लगता है कि राधा को 'काले ने खाया' है, और बड़े बड़े 'गारुड़ी' 'जंत्र-मंत्र' करके भी उसे जिला नहीं सके, तब कृष्ण एक 'मंत्र' से विषहर का विष दूर करने जाते हैं

हरि गारुड़ी तहाँ तब आए।
यह बानी वृषभानु-सुता सुनि, मन मन हरष बढ़ाए।
धन्य-धन्य आपन कौं कीन्हौ अतिहिं गई मुरझाइ।
तनु पुलकित रोमांच प्रगट भए आनँद अस्रु बहाइ।
बिह्वल देखि जननि भई ब्याकुल अँग विष गयौ समाइ।
सूर स्याम-प्यारी दोउ जानत अंतरगत को भाइ[5]।

बच्चे को अच्छे वस्त्राभूषण पहनाने पर भी 'राई-लोन' उतार दिया जाता है जिससे उसे किसी की नजर न लग जाय। माता यशोदा भी ऐसा करती है—

कबहुँ अंग भूषन बनावति, राइ लोन उतारि[6]।

अच्छे घराने के बच्चे यदि किसी बाहरी व्यक्ति के सामने अच्छा खाते-पीते हों और वह टोंक दे अथवा ललचायी दृष्टि से देख भर ले, तब भी बच्चों को दीठि या नजर लग जाने का डर रहता है। इसीलिए यशोदा कहती है—

बाहर जनि कबहुँ कुछ खैयै, दीठि लगैगी काहु[7]।

---

३. सा० १०-२५८।
४. सा० ७५२।
५. सा० ७५८।
६. सा० १०-११८।
७. सा० ६८७।

सामाजिक विश्वास—

सूरदास ने यों तो समाज-संगठन, वर्ण-व्यवस्था या वर्ण-महत्ता आदि के संबंध में कहीं विचार नहीं किया और—

सत्रु-मित्र हरि गनत न दोइ। जो सुमिरै ताकी गति होइ।

\+ \+ \+

राव-रंक हरि गनत न दोई। जो गावहि ताकी गति होई[८]।

जैसे वाक्य लिखकर वर्णों के ऊँच-नीच के भेद को जड़-मूल से ही उड़ा दिया; परंतु एक पद में श्रीकृष्ण और कुब्जा के संग की अनुपयुक्तता पर विचार करते करते गोपियों के मुख से उन्होंने कहलाया है—काग-हंस, लहसुन-कपूर, काँच-कंचन, गेरू-सिंदूर के संग की तरह तो कुब्जा और कृष्ण की संगति अनुपयुक्त है ही, उनका साथ उस तरह से भी खटकनेवाला है; जैसे—

भोजन साथ सूद्र बाम्हन के, तैसौ उनकौ साथ[९]।

कवि और भक्त सूर की उदारता को दबानेवाला यह वाक्य ब्राह्मण को श्रेष्ठ और शूद्र को नीच माननेवाली जन-मनोवृत्ति का ही परिचायक है।

---

८. सा० २-५। ९. सा० ३१५२।

पर्वोत्सव

भारतीय जीवन में पर्वोत्सवों की अधिकता इस बात की द्योतक है कि वे केवल परलोक की ही चिंता नहीं करते थे, इहलोक के भी सुख भोगना जानते थे। सूरदास के समय में जीवन को आनंदमय बनाने के उद्देश्य से, भगवान की लीला के बहाने, अनेक प्रकार के उत्सवों की योजना की जाती थी। उनके काव्य में दीपमालिका, होली आदि पर्वों तथा रास, हिंडोरा, फूलमंडली, डोल आदि उत्सवों का विशेष रूप से वर्णन हुआ है। यद्यपि रास-लीला जैसे आयोजनों के मूल में आध्यात्मिक भाव भी रहा है, परंतु सामान्य जनता गहराई में न जाकर राम-लीला के ढंग पर 'रास'-जैसी कृष्ण-लीलाएँ करके उत्साह के साथ उनमें आज भी भाग लेती है। सूरदास ने इन पर्वोत्सवों के लिए जिन जिन वस्तुओं को आवश्यक समझा है, उनकी सूची और जिस ढंग से उनका आयोजन किया जाता है, उसकी रूपरेखा मात्र प्रस्तुत करना यहाँ अभीष्ट है।

(अ) पर्व—

'दीपमालिका' और 'होली', दो पर्वों का वर्णन सूरदास ने विशेष रूप से किया है। दीपमालिका के साथ 'अन्नकूट' या 'गोबर्द्धन-पूजा' भी होती है जिसका संक्षिप्त वर्णन पीछे हो चुका है। मुख्य दिवस दीपमालिका का ही होता है जिसकी दीप्ति सूरदास ने 'कोटि रवि-चंद के समान' बतायी है। सब घरों के झरोखों आदि में मणि-मुक्ताओं की झालरें लटक रही हैं। गजमोतियों के चौक पुराये गये हैं जिनके बीच-बीच में लाल 'प्रवालिका' हैं। व्रज-बालिकाओं के साथ राधा जी समस्त शृंगार करके कंचन थालियों में झलमल दीप और अन्य सामग्री लेकर, 'करतालिका' पटक पटक कर गाती-गवाती, हँसती-हँसाती, नंद जी के द्वार पर पहुँचती हैं—

आजु दीपति दिव्य दीपमालिका
मनहु कोटि रबि चन्द्र कोटि छबि मिटि जो गई निशि कालिका।
गोकुल सकल बिचित्र मनि मंडित सोभित झाक झब झालिका।
गज मोतिन के चौक पुराये बिच बिच लाल प्रबालिका।
बर सिंगार बिरचि राधा जू चलीं सकल ब्रज बालिका।
झलमल दीप समीप साँज भरि लेकर कंचन थालिका।
करो प्रगट मदन मोहन पिय थकित बिलोकि बिसालिका।
गावत हँसत गवाय हँसावत पटकि पटकि करतालिका।
नंद-द्वार आनंद बढ्यौ अति देखियत परम सालिका।
सूरदास कुसुमनि सुर बरषत कर संपुट कर रमालिका[१०]।

बलराम और मोहन, पिश्ता, दाख, बादाम, छुहारा, खुरमा, खाझा, गूझा, मठरी आदि मेवा, मिठाई और पकवान लिये बैठे हैं तथा नाम ले लेकर वे प्रत्येक गोपी-ग्वाल को दे रहे हैं—

सुरभी कान्ह जगाय खरिकहि बल मोहन बैठे हैं ठठरी।
पिस्ता दाख बदाम छुहारा खुरमा खाझा गूझा मठरी।
घर घर हो नर-नारि मुदित मन गोपी ग्वाल जुरे बहु ठट री।
टेरि टेरि सब देति सबनि कौं, लै लै नाम बुलाइ निकट री।
देति असीस सकल ब्रजभामिनि जसुमति देति हरषि बहु पटरी।
सूर रसिक गिरिधर चिर जीवो, नंद महर हो नागर नट री[११]।

'सरद कुहू निसा' के इस पर्व पर सब आनंदित हैं, घर-घर में थापें दी जा रही हैं और मंगलाचार हो रहे हैं—

अपनैं अपनैं टोल कहत ब्रज-बासियाँ।
भोग भुगति लै चलौ, इंद्र के आसियाँ।
सरद-कुहू-निसि जानि, दीपमालिका बनाई।
गोपनि कैं घर आनंद, फिरत उनमद अधिकाई।
घर घर थापैं दीजियै, घर घर मंगलचार।
सात बरस कौ साँवरौ, खेलत नंद-दुवार[१२]।

---

१०. सा० ८०९। ११. सा० ८१०।
१२. सा० ८४१।

होली का उत्सव, सूरदास के अनुसार, सरस वसंत ऋतु की प्रथम पंचमी से ही आरंभ हो जाता है। कुमारी राधिका अपनी सखियों के सात 'छरी' लेकर कमलनयन श्रीकृष्ण और उनके सखाओं पर दौड़ती है। 'चोवा-चंदन-अगर-कुमकुमा' आदि से सुगंधित रंग पिचकारियों में भर भरकर छिड़का जा रहा है, गुलाल-अबीर उड़ाया जा रहा है, 'ताल-मृदंग-बीना-बाँसुरी-डफ' आदि बज रहे हैं। झूम-झूमकर युवक-युवतियाँ, सब 'झूमक' गा रहे हैं और 'तरुनीं बाल सयानी', सब गालियाँ भी गा रही हैं—

सुंदर बर सँग ललना बिहरति, सरस बसंत रितु आई।
लै लै छरी कुमारि राधिका, कमल नैन पर धाई॥
सरिता सीतल बहति मंद गति, रबि उत्तर दिसि आयौ।
अति रस भरी कोकिला बोली बिरहिनि बिरह जगायौ॥
द्वादस बन रतनारे देखियत, चहुँ दिसि टेसू फूले।
मौरे अँबुआ अरु द्रुम बेली, मधुकर परिमल-भूले॥
इत श्रीराधा उत श्री गिरिधर, इत गोपी उत ग्वाल।
खेलत फागु रसिक ब्रज-बनिता सुंदर स्याम तमाल॥
चोवा चंदन अबिर कुमकुमा छिरकत भरि पिचकारी।
उड़त गुलाल अबीर, जोति रबि दिसि दीपक उजियारी॥
ताल मृदंग बीन, बाँसुरी डफ, गावत गीत सुहाए।
रसिक गुपाल नवल ब्रज - बनिता, निकसि चौहटैं आए॥
झूमि झूमि झूमक सब गावतिं, बोलतिं मधुरी बानी।
देति परस्पर गारि मुदित मन, तरुनी बाल सयानी॥
सुर-पुर नर-पुर नाग-लोक, जल थल क्रीड़ा-सुख पावै।
प्रथम - बसंत - पंचमी - लीला, सूरदास जस गावै[१३]।

अवसर पाकर श्याम, राधा पर 'गेंदुक' चलाते हैं; परंतु वह मुख पर पट देकर बचा जाती है—

प्रिय प्यारी खेलैं जमुना-तीर। भरि केसरि कुम कुम अरु अबीर।
घसि मृगमद चंदन अरु गुलाल। रंग भीने अरगज बस्त्र माल।

---

१३. सा० २८५४।

कूजत कोकिल कल हंस मोर। ललितादिक स्यामा एक ओर।
बृंदादिक मोहन लई जोर। बाजे ताल मृदंग रबाब घोर।
प्रभु हँसि कै गेंदुक दई चलाइ। मुख पट राधा गई बचाइ।
ललिता पट मोहन गह्यौ धाइ। पीतांबर मुरली लई छिड़ाइ।
हौं सपथ करौं छाँड़ों न तोहि। स्यामा जू आज्ञा दई मोहिं।
इक निज सहचरि आई बसीठि। सुनि री ललिता तू भई ढीठि।
यह छाँड़ि दियौ तब नव किसोर। छबि रीझि सूर तृन दियौ तोर[१४]।

कंचन के माट और 'कमोर' सुगंधित रंगों से भरकर कभी कृष्ण 'वृषभानु की पौरि' जाते हैं

निकसि कुवँर खेलन चले, रँग होरी।
मोहन नंदकिसोर, लाल रँग होरी॥
कंचन माट भराइ कै, रँग होरी।
सौंधैं भरयौ कमोर, लाल रँग होरी।
झाँझ ताल सुर मँडले, रँग होरी।
बाजत मधुर मृदंग, लाल रँग होरी॥
तिन मैं परम सुहावनी, रँग होरी।
महुवरि बाँसुरि चंग, लाल रँग होरी॥
खेलत रँगीले लाल जू रँग होरी।
गए वृषभानु सुता की पौरि, लाल रँग होरी॥
जे ब्रज हुतीं किसोरिका, लाल रँग होरी।
ते सब आईं दौरि, लाल रँग होरी॥
सखि मुख देखन कारने, रँग होरी।
गाँठि दुहुँनि की जोरि, लाल रँग होरी॥
फगुआ दियौ न जाइ, जौ रँग होरी।
लागी राधा पाइँ, लाल रँग होरी॥
यह सुख सबकैं मन बसौ, रँग होरी।
सूरदास बलि जाइ, लाल रँग होरी[१५]॥

---

१४. सा० २८५६। १५. सा० २८६६।

और कभी 'ब्रज की बीथिनि बीथिनि' में 'नील-अरुन-सित-पील' बस्त्र पहने, हो हो करते डोलते हैं—

ब्रज की बीथिनि बीथिनि डोलत।
मदन गुपाल सखा सँग लीन्हें, हो हो हो हो बोलत॥
ताल मृदंग बीन डफ बाँसुरि, बाजत गावत गीत।
पहिरि बसन अनेक बरन तन, नील अरुन सित पीत॥
सुनि सब नारि निकसि ठाढ़ी भई, अपनें अपनें द्वारि।
नवसत सजें प्रफुल्लित आनन, जनु कुमुदिनी कुमारि[१६]॥

होली खेलनेवालों की 'बरात' का वर्णन भी सूरदास ने किया है जिसमें अनेक खिलाड़ी 'खरों' पर सवार हैं—

राते फगवा बरात साजि, अहो हरि होरी है।
खरनि भए असवार अहो हरि होरी है॥
धूरि धात रँग घट भरे, अहो हरि होरी है।
भरे पंच हथियार अहो हरि होरी है[१७]॥

गुलाल इतना उड़ाया जाता है कि 'बादर' लाल हो गये हैं और 'सिगरे अटा-अटारी' रँग जाते हैं। गालियाँ भी गायी जाती हैं जिनमें नंद महर तक का बखान कर दिया जाता है—

गारि नारि सब देहिं सुहानी। नंद महर लौं आनि बखानी।
उतरयौ सूर स्याम-मुख-पानी। गई लिवाइ जहँ राधा रानी[१८]॥

उत्तर में गोप भी 'बरसाने' का नाम लेकर 'गारी' देते-दिवाते हैं—

जमुना कूल मूल बंसीबट, गावत गोप धमारि।
लै लै नाउँ गाउँ बरसानो, देत दिवावत गारि॥
खेलि फागु मिलि कै मन मोहन, फगुवा दियो मँगाइ।
हरषित भईं सकल ब्रज-बनिता, सूरदास बलि जाइ[१९]॥

फाग खेलकर सब 'फगुआ' की माँग करते हैं—

---

१६. सा० २८६६। १७. सा० २९१४।
१८. सा० २८७८। १९. सा० २८९५।

सौंधे की उठति झकोर, मोहन रंग भरे।
चोवा चंदन अगरु कुंकुमा, सोहैं माट भरे॥
रतन जटित पिचकारी कर गहे, बालक बृंद खरे।
भरि पिचकारी प्रेम सौं डारी सो मेरे प्रान हरे॥
सब सखियनि मिलि मारग रोक्यौ, जब मोहन पकरे।
अंजन आँजि दियौ अँखियनि मैं, हा हा करि उबरे।
फगुवा बहुत मँगाइ साँवरे, कर जोरे आरजू करे।
धनि धनि सूर भाग ताके, प्रभु जाकैं सँग बिहरे[२०]॥

माता यशोदा सब बालाओं को रंग-रंग की 'पहिरावनि' तथा मेवा, मिश्री, अनेक रतन आदि देती हैं—

लेति बलैया वारि कै, अति बने कन्हाई।
ये ऐसियै ब्रजबाल, आज अति बने कन्हाई॥
रँग रँग पहिरावनि दई, अति बने कन्हाई।
जुवतिनि महर बुलाइ, आज अति बने कन्हाई॥
वह सुख प्रभु कौ देखि कै, अति बने कन्हाई।
सूरदास बलि जाइ, आजु अति बने कन्हाई[२१]॥

× × ×

नंद छिड़ावहु स्याम कौं, या जग मैं जस लेहु।
जसुमति धरि बृषभानु कैं, फगुआ हमरौ देहु॥
जसुमति हँसि सब सखिनि स्यौं राधे लीन्ही बोल।
मेवा मिश्री बहु रतन, दई सबनि भरि ओल॥
होरी हरषि हलाइ कैं, मोहन भूलैं डोल।
गावत सखी निसंक ह्वै, कहि अमृत बोल[२२]।

श्रीकृष्ण भी अपने सखाओं को उनकी इच्छानुसार 'फगुआ' देते हैं—

कर जोरे गिरिवरधर ठाढ़े, आज्ञा हमकौं दीजै।
जौ कछु इच्छा होइ तिहारी, सो सब फगुवा लीजै॥

---

२०. सा० २८६७। २१. सा० २८६६।
२२. सा० २६१५।

तब गिरिवरधर सखा बुलाए फगुवा बहुत मँगायौ।
जोइ जोइ बसन जाहि मन मान्यौ, सोइ सोइ तिहि पहिरायौ॥
राधा-मोहन जुग जुग जीवौ, सब कोउ भलौ मनायौ।
बाढ़ौ बंस नंद बाबा कौ, सूरदास जस गायौ[२३]॥

अंत में सब यमुना में स्नान करने जाते हैं—

बहुत भरे बलराम सबनि गहि। धौलागिरि मनु धातु चलीं बहि॥
न्हान चले जमुना कैं कूल। गोपी गोप भए अनुकूल।
जो रस बाढ़्यौ खेलत होरी। सारद का बरनै मति-भोरी॥
सूरदास सौ कैसैं गावै। लीला - सिंधु पार नहि पावै[२४]॥

पश्चात्, सब 'सेत-अरुन कोरे पाटंबर' पहनते और आभूषण धारण करते हैं। द्विजगण दूब-दधि लेकर 'गोचन-रोरी' का तिलक करते हैं और श्याम 'कंचन की बोरी' विप्र और बंदीजन को देते हैं—

ग्वाल बाल सब संग मुदित मन, जाइ जमुन जल न्हाइ हिलोरी।
नए बसन आभूषन पहिरत, अरुन, सेत पाटंबर कोरी॥
कुटुंब समाज-समेत करत द्विज तिलक, दूब-दधि गोचन रोरी।
सूरस्याम बिप्रनि, बंदीजन, देत रतन कंचन की बोरी[२५]॥

(आ) उत्सव—

रास, हिंडोरा, फूलमंली और डोल—इन चार उत्सवों का वर्णन सूरदास ने विशेष रूप से किया है। 'सरद निसि' को वृन्दा विपिन में 'जमुना पुलिन' पर रास आरंभ होता है। 'स्याम-स्यामा' तथा अन्य ब्रज-बालाएँ सभी प्रकार के सुंदर-सुंदर वस्त्राभूषणों से सुसज्जित होकर नृत्य करती हैं—

नृत्यत स्याम स्यामा-हेत।
मुकुट-लटकनि, भृकुटी-मटकनि, नारि मन सुख देत॥

---

२३. सा० २६१६। २४. सा० २६०१।
२५. सा० २६०८।

कबहुँ चलत सुगंध गति सौं, कबहुँ उघटत बैन।
लोल कुंडल गंड-मंडल, चपल नैननि सैन ॥
स्याम की छबि देखि नागरि, रही इक टक जोहि।
सूर-प्रभु उर लाइ लीन्हीं, प्रेम-गुन करि पोहि[२६] ॥

प्रातःकाल 'रास-रस से स्रमित' श्रीकृष्ण के साथ समस्त गोपियाँ यमुना में जल-विहार का आनंद लेती हैं।

'हिंडोरा' वर्षा ऋतु का उत्सव है। 'बिस्करमा' को बुलाकर हिंडोरना गढ़ाया जाता है; कंचन के खंभ हैं, 'मरुव-मयारि' चाँदी की हैं'—

हिंडोर हरि सँग झूलियै (हो) अरु पिय कौं देहि झुलाइ।
गई बीति ग्रीषम सरद-हित रितु, सरस बरषा आइ ॥
अब यहै साध पुरावहू हो, सुनहु त्रिभुवन-राइ।
गोपांगना गोपाल जू सौं, कहति गहि-गहि पाइ ॥
अब गढ़नहार हिंडोरना कौ, ताहि लेहु बुलाइ।
हम रमकि हिंडोरे चढ़ैं, अरु तुमहि देहु झुलाइ ॥
बन बननि कोकिल कंठ निरवति, करत दादुर सोर।
घन घटा कारी, स्वेत बग-पंगति, निरखि नभ ओर ॥
तैसीयै दमकति दामिनी, तैसोइ अंबर घोर।
तैसोइ रटत पपीहरा, तैसोइ बोलत मोर ॥
तैसीयै हरियरि भूमि बिलसति होति नहिं रुचि थोरि।
तैसीयै रंग सुरग बिधि-बधु, लेति है चित चोरि ॥
तैसीयै नन्हीं बूँद बरषति, झमकि-झमकि झकोरि।
तैसीयै भरि सरिता सरोवर, उमँगि चली मिति फोरि ॥
सुनि श्रीपति बिहँसि, बोले बिसकरमा सुत - धारि।
सचि खंभ कंचन के रुचिर रजत मरुव मयारि ॥
पटुली लगे नग नाग बहु रँग, बनी डाँडी चारि।
भँवरा भँवै भजि केलि भूले, नगर - नागर - नारि[२७] ॥

---

२६. सा० ११४८। २७. सा० २८३०।

हिंडोरने में विद्रुम मुक्ता आदि लटक रहे हैं—

सुरंग हिंडोलन माई, झूलत स्यामा स्याम।
द्वै खंभ बिसकर्मा बनाए, काम-कुन्द चढ़ाइ॥
हरित चूनी, जटित नग सब, लाल हीरा लाइ।
बहुत बिद्रुम, बहुत मुक्ता, ललित लटके कोर॥
बहुरंग रेसम-वरूहा, होत राग झकोर।
स्याम स्यामा संग झूलत, सखी देति झुलाइ[२८]॥

बैठने के लिए रत्नजटित पटुलियाँ हैं जिनमें बीच बीच में विद्रुम, हीरा, लाल आदि जड़े हुए हैं। हिंडोरने से मोतियों की झालरें भी लटक रही हैं—

जमुना - पुलिनहि रच्यौ, रँग सुरंग हिंडोरनौ।
रमत राम स्याम सँग ब्रज बालक, सुख पावत हँसि बोलनौ।
द्वै खंभ कंचन के मनोहर, रत्ननि जटित सुहावनौ।
पटुली बिच-बिच बिद्रुम लागे, हीरा लाल खचावनौ।
सुंदर डाँड़ि चुनी बहु लायौ, कोटिक मदन लजावनौ।
मरुव मयारि पिरोजा लटकत, सुन्दर सुढर ढगावनौ।
मोतिनि झालरि झुमका राजत, बिच नीलम बहु भावनौ।
पँच रँग पाट कनक मिलि डोरी, अति ही सुघर बनावनौ।
स्फटिक सिंहासन मध्य बिराजत, हाटक सहित सजावनौ।
हीरा-लाल-प्रबालनि पंगति, बहु मनि पचित पचावनौ।
मानौं सुरपुर तैं तिहिं सुरपति पठइ जु दियौ पठावनौ।
बिसकर्मा सुतहार भ्रुती धरि, सुरलभ सिलप दिखावनौ[२९]।

गोप - बालाएँ सुंदर वस्त्राभूषण धारण करके झुंड के झुंड झूलने आ जाती हैं—

सब पहिरि चुनि-चुनि चीर, चुहि चुहि चूनरी बहु रंग।
कटि नील लँहगा, लाल चोली, उबटि केसरि अंग।

---

२८. सा० २८३१। २९. सा० २८३२।

नवसात सजि नई नागरी, चलीं झुंड-झुडनि संग।
मुख-स्याम-पूरन-चंद कौं, मनु उमँगि उदधि तरंग।[३०]

सखियों में कोई तो 'झोंटा' देकर झुलाती है, कोई गाती है, कोई संग 'मचती' है, कोई 'मचने' को कहती है, कोई डरती और हा हा करके विनय करती है, कोई प्रिय की भुजा पकड़कर हिंडोरे से उतार देने को कहती है—

ललिता बिसाखा देहिं झोंटा, रीझि अंग न माति।
अति लाड़िली सुकुमारि डरपति स्याम उर लपटाति[३१]।

× × ×

हिंडोरैं झूलत स्यामा स्याम।
ब्रज-जुवती-मंडली चहूँघा, निरखत बिथकित बाम।
कोउ गावति, कोउ हरपि झुलावति, सब पुरवति मन-साध।
कोउ सँग मचति, कहति कोउ मचिहौं, उपज्यौ रूप अगाध।
कोउ डरपति हा हा करि बिनवति, प्यारी अंकम लाइ।
गाढ़ै गहति पियहिं अपनैं भुज, पुलकति अंग डराइ।
अब जनि मचौ पाइ लागति हौं, मोकौं देहु उतारि।
यह सुनि हँसत मचत अति गिरिधर, डरत देखि अति नारि।
प्यारी टेकि कहति ललिता सौं, मेरी सौं गहि राखि।
सूर हँसति ललिता चंद्रावलि, कहा कहति प्रिय भाखि[३२]।

इसी प्रकार गोपियाँ झुलाती हैं और बनवारी गाते हैं—

कबहुँ पुलकतिं, कबहुँ डरपतिं, कबहुँ निरखतिं नारि।
कबहुँ देतिं झुलाइ गोपी, गावहीं बनवारि[३३]।

'रास' और 'हिंडोरे' का वर्णन तो सूरदास ने विस्तार से किया है, परंतु 'फूल' या 'फूलमंडली' और 'डोल' का वर्णन बहुत संक्षेप में है। 'फूलमंडली' ग्रीष्म का उत्सव है। फूली हुई फुलवारियों में, सुगंधित पुष्पों के बीच आनंद मनाया

---

३०. सा० २८३०। ३१. सा० २८३३।
३२. सा० २८३४। ३३. सा० २८३५।

जाता है। सूरदास ने भी फूलों के फूले हुए कुंजों में, फूलों का महल बनाकर, फूलों की सेज बिछाकर, हर्ष से फूले दंपति का 'मगन' होकर विहार करना बताया है—

फूलनि के महल, फूलनि सेज, फूले कुंज बिहारी, फूली राधा प्यारी।
फूले वे दंपति नवल मगन फूले फूले करैं केलि न्यारियै न्यारी।
फूली लता बेलि, बिबिध सुमन फूले, फूले आनन दोऊ हैं सुखकारी।
सूरदास-प्रभु प्यारी पर वारत हरषि, फूले फूल चंपक बेल निवारी[३४]।

'डोल' का उत्सव वसंत ऋतु में मनाया जाता है। गोकुलनाथ वृषभानुनंदिनी के साथ 'डोल' में विराजते हैं। सबके वस्त्राभूषण आदि वैसे ही हैं जैसे 'हिंडोरे' के उत्सव में वे धारण करते हैं। प्रिय के साथ सब व्रज-सुंदरियाँ खेलती हैं, हँसती हैं, गाती हैं और परस्पर मीठे स्वर में संलाप करती हैं—

गोकुल नाथ बिराजत डोल।
संग लिए वृषभानु - नंदिनी, पहिरे नील निचोल।
कंचन रचित लाल मनि मोती, हीरा जटित अमोल।
झुलवहिं जूथ मिलै ब्रज-सुंदरि, हरषित करति कलोल।
खेलतिं, हँसतिं परस्पर गावतिं, बोलतिं, मीठे बोल।
सूरदास-स्वामी, पिय प्यारी, झूलत हैं झकझोल[३५]।

---

३४. सा० २४५६। ३५. सा० २६१६।

संस्कार

सूरदास ने अपने काव्य में मुख्य रूप से नौ संस्कारों—पुत्र-जन्म, छठी, नामकरण, अन्नप्राशन, वर्षगाँठ, कनछेदन, यज्ञोपवीत, विवाह और अन्त्येष्टि—का वर्णन किया है।

(अ) पुत्रजन्म—

राम और कृष्ण, दोनों के जन्म-संस्कारों का वर्णन सूरदास ने किया है—प्रथम का संक्षेप में और द्वितीय का विस्तार से। राम के जन्म पर सखियाँ मंगल गाती हैं, ऋषि अभिषेक कराते हैं और आँगन में 'सामवेद-धुनि' छा जाती है। महाराज के यहाँ पुत्र जन्म हुआ है; इसलिए अधीनस्थ शासकों के यहाँ से 'टीका' आने का भी उल्लेख मिलता है—

> रघुकुल प्रगटे हैं रघुबीर।
>
> देस देस तैं टीकौ आयो, रतन कनक मनि हीर [३६]।

अयोध्या के घर घर में मंगल-बधाई होती है। 'मागध बंदी सूत' के लिए 'गो गयंद हय चीर' लुटाये जाते हैं—

> घर-घर मंगल होत बधाई, अति पुरबासिन भीर।
>
> आनँद-मगन भए सब डोलत, कछू न सोध सरीर।
>
> मागध - बंदी - सूत लुटाए, गो-गयंद - हय - चीर।
>
> देत असीस सूर, चिरजीवौ रामचंद्र रनधीर [३७]॥

---

३६. सा० ६-१८।   ३७. सा० ६-१८।

राजा ने दान देते समय 'महा बड़े नग हीर' भी नहीं बचाये अर्थात् सर्वस्व लुटा दिया—

देत दान राख्यो न भूर कछु, महा बड़े नग हीर।
भए निहाल सूर सब जाचक जे माँगे रघुबीर[३८]॥

कृष्ण का जन्मोत्सव-वर्णन अपेक्षाकृत विस्तार से है। आरंभ में 'नार' छेदने की चर्चा है। 'मनिमय जटित हार ग्रीवा कौ' लेकर भी 'दाई' झगड़ा करती है—

जसुदा, नार न छेदन दैहौं।
मनिमय जटित हार ग्रीवा कौ, वहै आज हौं लैहौं।
औरनि के हैं गोप-खरिक बहु, मोहि गृह एक तुम्हारौ।
मिटि जु गयौ संताप जनम कौ, देख्यौ नंद-दुलारौ।
बहुत दिननि की आसा लागी, झगरिनि झगरौ कीनौ।
मन मैं बिहँसि तबै नँदरानी, हार हिए कौ दीनौ।
जाकैं नार आदि ब्रह्मादिक, सकल बिस्व - आधार।
सूरदास प्रभु गोकुल प्रगटे, मेटन कौं भू भार॥[३९]

'कंचन के अभरन', 'मोतिनि थार भरे' और 'हार-रतन' पाकर ही वह संतुष्ट होती है। तब वह 'नार' छेदकर बधाई देती है—

अपने मन कौ भायौ लैहौं, मोतिनि थार भराई।
यह औसर कब ह्वैहै फिरिकै, पायौ देव मनाई।
इतनी सुनत मगन ह्वै रानी बोलि लए नँदराई।
सूरदास कंचन के अभरन लै झगरिनि पहराई[४०]॥

'ताल-मृदंग, पनव-निसान-रुज-मुरज सहनाई,' 'डफ झाँझ-भेरि-पटह' आदि बजते हैं। बारिनि बंदनवार बाँधती है—

उठी रोहिनी परम अनंदित, हार रतन लै आई।
नार छीनि तब सूर स्याम कौ, हँसि हँसि देति बधाई[४१]॥

---

३८. सा० ६-१६।
३९. सा० १०-१५।
४०. सा० १०-१६ व १६-१०।
४१. सा० २८३२।

बाजत ताल-मृदंग जंत्र गति, चरचि अरगजा अंक चढ़ाई।
अच्छत दूध लिये रिषि ठाढ़े, बारिनि बंदनवार बँधाई[४२] ॥

× × ×

बाजत पनव-निसान पंच बिधि, रुंज-मुरज-सहनाई।
महर-महरि ब्रज-हाट लुटावत, आनँद उर न समाई[४३] ॥

× × ×

सिर दधि-माखन के माट, गावत गीत नए।
डफ-झाँझ-मृदंग बजाइ, सब नँद भवन गए[४४] ॥

× × ×

अच्छत-दूध लिए रिषि ठाढ़े, बारिनि बंदनवार बँधाई[४५] ॥

कंचन कलश सजाये जाते हैं। चंदन से 'चौक' लीपा जाता है, आरती सँजोकर धरी जाती है। सात सींकों से 'सथिया' बनाया जाता है—

पुर घर-घर भेरि-मृदंग, पटह-निसान बजे।
बर बारिनि बंदनवार, कंचन कलस सजे[४६] ॥

× × ×

चौक चंदन लीपि कै, धरि आरती सँजोइ।
कहत घोष-कुमारि ऐसो अनंद जौ नित होइ ॥
द्वार सथिया देति स्यामा, सात सींक सजाइ।
नव किसोरी मुदित ह्वै-ह्वै गहति जसुदा पाइ[४७] ॥

ऋषिगण 'अच्छत-दूब' लिये द्वार पर खड़े हैं। गोकुलवासियों में कुछ तो परस्पर 'हरद दही' और कुछ 'चोवा-चंदन-अबिर' छिड़कते हैं—

अच्छत दूब लिए रिषि ठाढ़े, बारनि बंदनवार बँधाई।
छिरकत हरद दही, हिय हरषत, गिरत अंक भरि लेत उठाई[४८] ॥

---

४२. सा० १०-१६। ४३. सा० १०-२२।
४४. सा० १०-२४। ४५. सा० १०-१६।
४६. सा० १०-२४। ४७. सा० १०-२६।
४८. सा० १०-१६।

× × ×

मागध, सूत, भाट, धन लेत जुरावन रे।
चोवा-चंदन-अबिर, गलिन छिरकावन रे[४९] ॥

कुछ सिर पर 'दधि-दूब' धरते हैं—

इक अभरन लेहिं उतारि, देत न संक करैं।
इक दधि-गोरोचन-दूब, सबकैं सीस धरैं[५०] ॥

'वृद्ध तरुन बाल', सब नाचते हैं। सबने गोरस की कीच मचा रखी है। गोकुल की सारी भूमि लुटाये गये रत्नों से छा गयी है—

हौं इक नई बात सुनि आई।
महरि जसोदा ढोटा जायौ, घर-घर होति बधाई।
द्वारैं भीर गोप-गोपिनि की, महिमा बरनि न जाई।
अति आनंद होत गोकुल मैं, रतन भूमि सब छाई।
नाचत वृद्ध, तरुन अरु बालक, गोरस-कीच मचाई।
सूरदास स्वामी सुख-सागर सुंदर स्याम कन्हाई[५१]॥

ब्रज की स्त्रियाँ समस्त सुंदर वस्त्राभूषण धारण करके 'कंचन-थाल' में 'दूब-दधि रोचन' लेकर 'बधाई' गाती हुई नंद जी के घर जाती हैं।

हौं सखि नई चाह इक पाई।
ऐसे दिनन नंद कैं सुनियत, उपज्यौ पूत कन्हाई।
बाजत पनव-निसान पंचबिधि, रुंज-मुरज-सहनाई।
महर-महरि ब्रज-हाट लुटावत, आनँद उर न समाई।
चलौ सखी, हमहूँ मिलि जैऐ, नैंकु करौ अतुराई।
कोउ भूषन पहिर्‌यौ, कोउ पहिरति, कोउ वैसैहिं उठि धाई।
कंचन-थार दूब-दधि रोचन, गावति चारु बधाई।
भाँति-भाँति बनि चलीं जुवति जन, उपमा बरनि न जाई।
अमर बिमान चढ़े सु देखत, जै-धुनि-सब्द सुनाई।
सूरदास प्रभु भक्त-हेत-हित, दुष्टनि के दुखदाई[५२] ॥

---

४९. सा० १०-२८। ५०. सा० १०-२४।
५१. सा० १०-२१। ५२. सा० १०-२२।

वहाँ दस - पाँच सखियाँ मिलकर 'मंगलगीत' गाती और उत्सव मनाती हैं—

गुन गावत मंगल गीत, मिलि दस पाँच अली।
मनु भोर भएँ रबि देखि, फूली कमल - कली।
पिय - पहिलैं पहुँचीं जाइ अति आनंद भरीं।
लईं भीतर भवन बुलाइ, सब सिसु पाइ परीं[५३]॥

नंद जी स्नान करके 'कुश' हाथ में लेकर, सभा के बीच में सिर पर 'दूब' धरकर बैठते हैं—

तब न्हाइ नंद भए ठाढ़, अरु कुस हाथ धरे।
नांदीमुख पितर पुजाइ, अंतर सोच हरे[५४]॥

× × ×

सिर पर दूब धरि, बैठे नंद सभा-मधि, द्विजन कौं गाइ दीनी बहुत मँगाइ कै[५५]॥

'नांदीमुख' श्राद्ध करके वे 'पितरों' को पूजते और संतुष्ट करते हैं। फिर चंदन से विप्रों का तिलक करते हैं; वस्त्राभूषण पहनाकर सबके 'पैर पड़ते' हैं। ताँबे से खुर, चाँदी से पीठ और सोने से सींग मढ़ी हुई अनगिनती गैयाँ उन्होंने ब्राह्मणों को दान में दी हैं। पश्चात् इष्ट-मित्र-बन्धुओं के माथे पर मृगमद-मलय-कपूर का उन्होंने तिलक किया; सबको मणि-मालाएँ पहनायीं और वस्त्रादि देकर संतुष्ट किया। कुलबधुओं को भी उन्होंने अनेक प्रकार के अंबर और साड़ियाँ दीं। तदनंतर बंदी-जन मागध-सूतवृंद में से जिसने जो माँगा, उसे वही दिया और तब—

आए पूरन आस कै सब मिलि देत असीस।
नंदराइ कौ लाडिलौ, जीवै कोटि बरीस[५६]।

द्वार पर ढाढ़ी और ढाढ़िनि 'हुरके' बजाते और मनचाही वस्तु पाकर मस्तक नवाते हैं—

ढाढ़ी और ढाढ़िनि गावैं, ठाढ़े हुरके बजावैं, हरषि असीस देत मस्तक नवाइ कै[५७]॥

---

५३. सा० १०-२४। ५४. सा० १०-२४।
५५. सा० १०-३१। ५६. सा० १०-२७।
५७. सा० १०-३१।

नंद जी के द्वार पर आज जो याचक बनकर आये थे, वे इतनी धन-संपत्ति ले गये कि फिर 'जाचक न कहाये'—

> अति आनंद नंद रस भीने। परबत सात रतन के दीने।
> कामधेनु तैं नैंकु न हीनी। द्वै लख धेनु द्विजनि कौं दीनी।
> नंद-पौरि जे जाँचन आए। बहुरौ फिरि जाचक न कहाए।
> घर के ठाकुर कैं सुत जायौ। सूरदास तब सब सुख पायौ[५८] ॥

अपार दान-सामग्री लेकर मार्ग में जाते हुए वे ऐसे जान पड़ते थे जैसे कहीं के 'भूप' जा रहे हों—

> (नंद जू) मेरैं मन आनंद भयौ, मैं गोबर्धन तैं आयौ।
> तुम्हरैं पुत्र भयौ, हौं सुनि कै, अति आतुर उठि धयौ।
> बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि-सुनि दूरि-दूरि तैं आए।
> इक पहिलैं ही आसा लागे, बहुत दिननि तैं छाए।
> ते पहिरे कंचन - मनि - भूषन, नाना बसन अनूप।
> मोहिं मिले मारग मैं, मानौं जात कहूँ के भूप।
> तुम तौ परम उदार नंद, जो माग्यौ सो दीन्हौ।
> ऐसौ और कौन त्रिभुवन मैं, तुम सरिस साकौ कीन्हौं[५९] ॥

(आ) छठी—

यह संस्कार 'सोहिलौ' से आरंभ होता है। पास - परोसिनें, सखी सहेलरी, सब एकत्र हो जाती हैं। मालिनि 'तोरना' बाँधती है। आँगन में केले 'रोपे' जाते हैं, सुनार सोने का 'ढोलना' गढ़कर लाता है, ललन की 'आरती' का आयोजन होता है। नाइन महावर लगाती है। 'दाई' को 'लाख टका, झूमका और साड़ी नेग' में दी जाती है। विश्वकर्मा बढ़ई ढोलना' गढ़कर लाता है। कोरे कपड़े निकाले जाते हैं। जाति - पाँति के स्त्री-पुरुषों की 'पहरावनी' की जाती हैं और अंत में 'काजर-रोरी-ऐपन' से 'छठी कौ चार' होता है—

---

५८. सा० १०-३२। ५९. सा० १०-३५।

गौरि गनेस्वर बीनऊँ (हो) देवी सारद तोहिं।
गावौं हरि को सोहिलौ (हो), मन आखर दे मोहिं।
हरषि बधावा मन भयौ (हो) रानी जायौ पूत।
घर बाहर माँगैं सबै (हो) ठाढ़े मागध-सूत।
आठ मास चंदन पियौ (हो), नवएँ पियौ कपूर।
दसएँ मास मोहन भए (हो) आँगन बाजे तूर।
हरषीं पास-परोसिनैं (हो), हरषे नगर के लोग।
हरषीं सखी-सहेलरी (हो), आनँद भयौ सुभ-जोग।
बाजन बाजैं गहगहे (हो), बाजैं मदिर भेरि।
मालिनि बाँधै तोरना (रे) आँगन रोपैं केरि।
अनगढ़ सोना ढोलना (गढ़ि), ल्याए चतुर सुनार।
बीच बीच हीरा लगे (नँद) लाल-गरे को हार।
जसुमति भाग सुहागिनी (जिनि), जायौ हरि सो पूत।
करहु ललन की आरती (री) अरु दधि काँदौ सूत।
नाइनि बोलहु नवरँगी (हो) ल्याउ महावर बेग।
लाख टका अरु झूमका (देहु) सारी दाइ कौं नेग।
अगरु चंदन कौ पालनौ (रँगि) इँगुर ढार सुढार।
लै आयौ गढ़ि ढोलना (हो) बिसकर्मा सुतहार।
धनि सो दिन धनि सो घरी हो धनि-धनि जोतिषि-जाग।
धन्य धन्य मथुरापुरी (हो) धन्य महर को भाग।
धनि धनि माता देवकी (हो) धनि बसुदेव सुजान।
धनि धनि भादौं अष्टमी हो, जनम लियौ जब कान्ह।
काढ़ौ कोरे कापरा (अरु) काढ़ौ घी के भौन।
जाति पाँति पहिराइ कै (सब), समदि छतीसौ पौन।
काजर रोरी आनहू (मिलि) करौ छठी कौ चार।
ऐपन की-सी पूतरी (सब) सखियनि कियो सिंगार।
क्रीट मुकुट सोभा बनी (सुभ), अंग बनी बनमाल।
सूरदास गोकुल प्रगट (भए) मोहन मदन गोपाल[६०]॥

६०. सा० १०-४०।

(३) नामकरण—

ऋषिराज गर्ग नंद-भवन में पधारते हैं। नंद जी उनके चरण धोकर चरणोदक लेते और बड़े आदर से 'अरघासन' देते हैं—

नंद-भवन रिषिराज गए।
चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, अरघासन करि देत दए।
धन्य आज बड़ भाग हमारे, रिषि आए, अति कृपा करी।
हम कहा धनि, धनि नंद-जसोदा, धनि यह ब्रज जहँ प्रगट हरी[६१] ॥

गर्ग जी तब 'लगन सोधकर और जोतिष गनिकै' नवजात शिशु के अनेक 'गुन' या 'लक्षण' बताते हैं। ब्रज-बासी उनको सुन-समझकर बहुत आनंदित होते हैं—

(नंद जू) आदि जोतिषी तुम्हरे घर कौ, पुत्र जन्म सुनि आयौ।
लगन सोधि सब जोतिष गनि कै, चाहत तुमहिं सुनायौ।
संबत सरस बिभावन, भादौं, आठैं तिथि बुधबार।
कृष्न पच्छ, रोहिनी अर्द्ध निसि, हर्षन जोग उदार।
बृष है लग्न, उच्च के निसिपति, तनहिं बहुत सुख पैहैं।
चौथे सिंह रासि के दिनकर, जीति सकल महि लैहैं।
पचएँ बुध कन्या कौ जौ है, पुत्रनि बहुत बढ़ैहैं।
छठएँ सुक्र तुला के सनि जुत, सत्रु रहन नहिं पैहैं।
ऊँच - नीच जुवती बहु करिहैं, सतएँ राहु परे हैं।
भाग्य भवन मैं मकर मही-सुत, बहु ऐस्वर्य बढ़ैहैं।
लाभ - भवन मैं मीन बृहस्पति नवनिधि घर मैं ऐहैं।
कर्म भवन के ईस सनीचर, स्याम बरन तन ह्वैहैं।
आदि सनातन परब्रह्म प्रभु, घट - घट अंतरजामी।
सो तुम्हरैं अवतरे आनि कै सूरदास के स्वामी[६२] ॥

× × ×

धन्य जसोदा भाग तिहारौ, जिनि ऐसौ सुत जायौ।
जाकैं दरस-परस सुख तन-मन कुल कौ तिमिर नसायौ।

---

६१. सा० १०-८५   ६२. सा० १०-८६।

बिप्र - सुजन - चारन - बंदीजन, सकल नंद-गृह आए।
नूतन सुभग दूब - हरदी - दधि हरषित सीस बँधाए।
गर्ग निरूपि कह्यौ सब लच्छन, अबिगत हैं अबिनासी।
सूरदास प्रभु के गुन सुनि - सुनि, आनंदे ब्रजबासी[६३] ॥

बिप्र - सुजन - चारन - बंदीजन आदि भी तब नंद - गृह आते हैं और दान-मान पाकर सुखी होते हैं।

(ई) अन्नप्राशन—

कुछ दिन कम 'षट' मास के होने पर 'अनप्रासन' संस्कार होता है। बिप्र बुलाकर 'रासि सोधकर' सुदिन निश्चित किया जाता है। सखियाँ बुलायी जाती हैं जो नंद जी का नाम लेकर 'गारी' गाती हैं—

कान्ह कुँवर की करहु पासनी, कछु दिन घटि षट मास गए।
नंद महर यह सुनि पुलकित जिय हरि अनप्रासन जोग भए।
बिप्र बुलाइ नाम लै बूझ्यौ, रासि सोधि इक सुदिन धर्यौ।
आछौ दिन सुनि महरि जसोदा, सखिनि बोलि सुभ गान कर्यौ।
जुवति महरि कौं गारी गावति और महरि कौ नाम लिए।
ब्रज घर घर आनंद बढ़्यौ अति प्रेम पुलक न समात हिए।
जाकौं नेति-नेति स्रुति गावत, ध्यावत सुर-मुनि ध्यान धरे।
सूरदास तिहिं कौं ब्रज-बनिता झकझोरति उर अंक भरे[६४] ॥

नंद जी की 'पाँति' की ब्रजबंधुओं में कोई ज्योनार करती है, कोई घी के पकवान बनाती है और कोई नाना प्रकार के व्यंजन तैयार करती है। अपनी जाति के सब लोगों को नंद जी बुलाते हैं और आदर से बैठाते हैं। माता यशोदा उबटन लगाकर कान्ह को स्नान कराती और 'पटो - भूषन' पहनाती हैं। पुत्र के तन में 'झगुली', सिर पर लाल 'चौतनी' और दोनों हाथ-पैरों में 'चूरा' देखकर माता फूली नहीं समाती। नंद जी तब बालक को गोद में लेकर मंडली के बीच में बैठते और उसका मुँह जुठराते हैं—

---

६३. सा० १०-८७। ६४. सा० १०-८८।

षटरस के परकार जहाँ लगि लै लै अधर छुवावत।

× × ×

तनक तनक जल अधर पौंछि कै जसुमति पै पहुँचाए[६५]।

इसके उपरांत 'पनवारे परसाये' जाते हैं और सब लोग बड़ी रुचि से भोजन करते हैं—

महर गोप सबही मिलि बैठे, पनवारे परसाए।
भोजन करत अधिक रुचि उपजी, जो जाकैं मन भाए[६६] ॥

(उ) वर्षगाँठ—

बालक कृष्ण जब वर्ष भर का होता है, तब प्रथम वर्षगाँठ संस्कार किया जाता है। माता यशोदा बच्चे को स्नान कराती, पोंछती और वस्त्राभूषण पहनाती है। गले में 'मनिमाला' और सिर पर 'चौतनी' पहने, माथे पर 'डिठौना' लगाये, आँख में अंजन डलाये और शरीर पर 'निचोल' पहने बालक 'कलबल बोलता है—

आजु भोर तमचुर के रोल।
गोकुल मैं आनंद होत है, मंगल धुनि महराने टोल।
फूले फिरत नंद अति सुख भयौ, हरषि मँगावत फूल तमोल।
फूली फिरत जसोदा तन-मन, उबटि कान्ह अन्हवाइ अमोल।
तनक बदन दोउ तनक-तनक कर, तनक चरन, पोंछति पट झोल।
कान्ह गरैं सोहति मनि-माला, अंग अभूषन अँगुरिनि गोल।
सिर चौतनी डिठौना दीन्हौ, आँखि आँजि पहिराइ निचोल।
स्याम करत माता सौं झगरौ अटपटात कलबल कर बोल।
दोउ कपोल गहिकै मुख चूमति, बरष दिवस कहि करत कलोल।
सूर स्याम ब्रज-जन-मोहन-बरष-गाँठि कौ डोरा खोल[६७] ॥

आँगन चंदन से लिपाया जाता है, मोतियों से चौक पूरा जाता है और शुभ घड़ी निश्चित करने के लिए विप्र बुलाया जाता है। 'अच्छत-दूब-दल' बँधाकर लाल की गाँठ जुड़ायी जाती है—

---

६५. सा० १०-८६। ६६. सा० १०-८६।
६७. सा० १०-९४।

अरी, मेरे लाल की आजु बरषगाँठि, सबे
सखिनि कौं बुलाइ मंगल-गान करावौ।
चंदन आँगन लिपाइ, मुतियनि चौकें पुराइ,
उमँगि अँगनि आनंद सौं तूर बजावौ।
मेरे कहैं विप्रनि बुलाइ, एक सुभ घरी धराइ,
बागे चीरे बनाइ, भूषन पहिरावौ।
अछत-दूब दल बँधाइ, लालन की गाँठि जुराइ,
इहै मोहिं लाहौ नैननि दिखरावौ[६८]॥

ब्रज-नारियाँ सुंदर तान से मंगल गाती हैं और माता बालक की छवि पर 'तृन तोड़ती' हैं—

उमँगीं ब्रजनारि सुभग, कान्ह बरष-गाँठि उमँग, चहतिं बरष बरषनि।
गावहिं मंगल सुगान, नीके सुर नीकी तान, आनंद अति हरषनि।
कंचन-मनि-जटित-थार रोचन, दधि, फूल-डार मिलिबे की तरसनि।
प्रभु बरष-गाँठि जोरति, वा छवि पर तृन तोरति सूर अरस परसनि[६९]॥

(ऊ) कनछेदन—

कान्ह कुँवर को, 'कनछेदन' के पूर्व बहलाने के लिए, हाथ में 'सोहारी और गुड़ की भेली' दी जाती है। सींक से कानों के पास 'रोचना' का चिह्न सा लगाया जाता है। कंचन के दो 'दुर' पहले ही तैयार करा लिये गये हैं। तब नौआ बहुत शीघ्रता से कान छेद देता है। बालक पर 'मनि-मुकुता' निछावर किये जाते हैं और सारे गोकुल में सुख-सिंधु लहराता है—

कान्ह कुँवर को कनछेदन है, हाथ सोहारी भेली गुर की।
बिधि बिहँसत, हरि हँसत हेरि हरि जसुमति की धुकधुकी सु उर की।
रोचन भरि लै देत सींक सौं, स्रवन निकट अतिही चातुर की।
कंचन के द्वै दुर मँगाइ लिए, कहौं कहा छेदन आतुर की।
लोचन भरि-भरि दोऊ माता, कनछेदन देखत जिय मुरकी।
रोवत देखि जननि अकुलानी, दियौ तुरत नौआ कौं घुरकी।

---

६८. सा० १०-६५। ६९. सा० १०-६६।

हँसत नँद, गोपी सब बिहँसीं, झमकि चलीं सब भीतर दुरकी।
सूरदास नँद करत बधाई, अति आनंद बाल ब्रज पुर की[७०] ॥

(ए) यज्ञोपवीत—

कंस-वध के पश्चात् हरि-हलधर का यज्ञोपवीत संस्कार होता है। गर्ग जी से दोनों 'गायत्री' मंत्र सुनते हैं। ब्राह्मणों को अनेक धेनु दान में दी जाती हैं। नारियाँ मंगलचार गाती हैं—

बसुद्यौ कुल ब्यौहार बिचारि।
हरि हलधर कौ दियौ जनेऊ, करि षटरस ज्यौनारि।
जाके स्वास-उसाँस लेत मैं प्रगट भए स्रुति चार।
तिन गायत्री सुनी गर्ग सौं प्रभु गति अगम अपार।
बिधि सौं धेनु दई बहु बिप्रनि, सहित सर्व-ऽलंकार।
जदुकुल भयौ परम कौतूहल, जहँ तहँ गावति नार।
मातु देवकी परम मुदित ह्वै, देति निछावरि वारि।
सूरदास की यहै आसिषा, चिर जिवौ नंद-कुमार[७१] ॥

लोक-लोक से टीका आता है। 'ढोल-निमान-संख' बजते हैं और माता देवकी हरि-हलधर पर 'रतन-पट-सारी' आदि वस्तुएँ निछावर करती है—

आजु परम दिन मंगलकारी।
लोक लोक कौ टीकौ आयौ, मुदित सकल नर-नारी।
सिव सुरेस सेष औरौ बहु, चतुरानन कर चारी।
हर कर पाटबंध, न्योछावरि करत रतन पट सारी।
बाजत ढोल-निसान, संख रव होत कुलाहल भारी।
अपने अपने लोक चले सब सूरदास बलिहारी[७२] ॥

(ऐ) विवाह—

राम-जानकी, वसुदेव - देवकी, राधा-कृष्ण और रुक्मिणी-कृष्ण—इन चार विवाहों का वर्णन सूरदास ने मुख्य रूप से किया है। राम का विवाह धनुष-भंग के

---

७०. सा० १०-१८१। ७१. सा० ३०६३।
७२. सा० ३०६४।

पश्चात् होता है। राजा दशरथ महाराज जनक के यहाँ अपने समस्त संबंधियों, इष्ट-मित्रों और नगर-निवासियों की 'बरात' सजाकर पहुँचते हैं, मोतियों से 'चौक' पुराये जाते हैं, विप्रगण 'बेद-धुनि' करते हैं, युवतियाँ मंगल गाती हैं। विवाह के अनंतर राम, सखियों के बीच में बैठी जानकी जी का 'कंकन' खोलते हैं। 'कनक-कुंडी' में पूँगीफल-जुत निरमल जल रखा जाता है। इसमें राम जानकी 'जूप' खेलते हैं—

कर कंपै कंकन नहिं छूटै।
राम-सिया-कर-परस मगन भए, कौतुक निरखि सखी सुख लूटैं।
गावत नारि गारि सब दै दै, तात मात की कौन चलावै।
तब कर डोरि छुटै रघुपति जू जब कौसिल्या माता आवैं।
पूँगी फल-जुत जल निरमल धरि, आनी भरि कुंडी जु कनक की।
खेलत जूप सकल जुवतिनि मैं, हारे रघुपति, जिती जनक की।
धरे निसान अजिर गृह मंगल, बिप्र बेद-अभिषेक करायौ।
सूर अमित आनंद जनकपुर, सोइ सुकदेव पुराननि गायौ[७३]॥

देवकी के विवाह का विवरण कवि ने नहीं दिया है। केवल मंगलचार के साथ देवकी के विदा होने और दहेज-रूप में 'हय-गय-रतन-हेम-पाटंबर' दिये जाने मात्र की उसने चर्चा की है—

बाल बिनोद भावती लीला, अति पुनीत मुनि भाषी।
सावधान ह्वै सुनौ परीच्छित, सकल देव मुनि साखी।
कालिंदी कैं कूल बसत इक मधुपुरि नगर रसाला।
कालनेमि अरु उग्रसेन - कुल, उपज्यौ कंस भुवाला।
आदि - ब्रह्म - जननी, सुर - देवी, नाम देवकी बाला।
दई बिवाहि कंस बसुदेवहिं, दुख-भंजन सुखमाला।
हय - गय - रतन - हेम - पाटंबर आनंद मंगलचारा[७४]॥

राधा से कृष्ण के गंधर्व-विवाह का वर्णन कवि ने विस्तार से किया है। उबटन-स्नान-शृंगार के पश्चात् 'कुँवरि' 'चौरी' में लायी जाती है और हरि मोर-मुकुट का

---

७३. सा० ६-२५। ७४. सा० १०-४।

मौर धारण करके वर-रूप में आते हैं। सब गोपियाँ 'नेवते' आयी हैं और मिलकर 'मंगल' गाती हैं। नव फूलों का मंडप छाया जाता है, बेदी बनती है जिसमें श्याम-श्यामा बैठते हैं। 'गारियाँ' गायी जाती हैं, 'पाणिग्रहण' होता है और तब 'भाँवरें' पड़ती हैं—

मिलि मन दै सुख आसन बैसे। चितवनि वारि किए सब वैसे।
तापर पानिग्रहन बिधि कीन्हीं। तब मंडप भ्रमि भौंवरि दीन्हीं।

तब देत भौंवरि कुंज-मंडप, प्रीति-ग्रन्थि हिये परी।
अति रुचिर परम पवित्र राका, निकट बृंदा सुभ घरी।
गाए जु गीत पुनीत बहु बिधि, बेद-रुचि-सुंदर-ध्वनी।
श्रीनंद सुत बृषभानु-तनया रास मैं जोरी बनी॥

मनमथ सैनिक भए बराती। द्रुम फूले बन अनुपम भाँती।
सुर बंदीजन मिलि जस गाए। मघवा बाजन आनँद बजाए।

बाजहिं जु बाजन सकल सुर नभ पुहुप अंजलि बरषहीं।
थकि रहे ब्योम-बिमान, मुनि-जन जय-सबद करि हरषहीं।
सुनि सूरदासहिं भयौ आनँद, पूजी मन की साधिका।
श्री लाल गिरिधर नवल दूलह, दुलहिनी श्री राधिका[७५]।

इसके उपरांत सखियाँ पहले तो कृष्ण से राधा के 'कंकन' की 'गाँठ' खोलने को कहती हैं और तब राधा से—

यह ब्रत हिय धरि देवी पूजी। है कछु मन अभिलाष न दूजी।
दीजै नंद-सुवन पति मेरैं। जो पै होइ अनुग्रह तेरैं।

तब करि अनुग्रह वर दियौ, जब बरष जुवतिनि तप कियौ।
त्रैलोक्य-भूषन पुरुष सुंदर, रूप गुन नाहिन बियौ।
इत उबटि सोरि सिंगार सखियनि, कुँवरि चौरी आनियौ।
जा हित कियौ ब्रत नेम-संजम, सो घरी बिधि बानियौ॥

मोर मुकुट रचि मौर बनायौ। माथे पर धरि हरि बर आयौ।
तनु स्यामल पट पीत दुकूले। देखत घन-दामिनि मन भूले।

---

७५. सा० १०७२।

बर दामिनी-घन कोटि बारौं, जब निहारौं वह छबी।
कुंडल बिराजत गंड मंडल, नहीं सोभा ससि रबी।
अब और कौन समान त्रिभुवन सकल गुन जिहिं माहियाँ।
मन मोर नाचत संग डोलत, मुकुट की परिछाहियाँ॥
गोपी जन सब नेवते आईं। मुरली धुनि तैं पठइ बुलाईं।
बहु बिधि आनंद मंगल गाए। नव फूलनि के मंडप छाए॥
छाए जु फूलनि कुंज-मंडप, पुलिन मैं बेदी रची।
बैठे जु स्यामा स्याम बर, त्रैलोक्य की सोभा सची।
उत कोकिला-गन करैं कुलाहल, इत सकल ब्रजनारियाँ।
आईं जु नेवते दुहूँ दिसि तैं, देति आनँद गारियाँ॥
प्रथम ब्याह बिधि होइ रह्यौ हो कंकन-थार बिचारि।
रचि रचि पचि पचि गूँथि बनायौ नवल निपुन ब्रजनारि॥
बड़े हुहौ तौ छोरि लेहु जौ, सकल घोष के राइ।
कै कर जोरि करौ बिनती, कै छुवौ राधिका पाइ॥
यह न होइ गिरि कौ धरिबौ हो, सुनहु कुँवर ब्रजनाथ।
आपुन कौं तुम बड़े कहावत, काँपन लागे हाथ॥
बहुरि सिमिटि ब्रज-सुंदरि सब मिलि दीन्हीं गाँठि छुराइ।
छोरहु बेगि कि आनहु अपनी, जसुमति माइ बुलाइ॥
सहज सिथिल पल्लव तैं हरि जू, लीन्हौ छोरि सँवारि।
किलकि उठीं तब सखी स्याम की तुम छोरौ सुकुमारि॥
पचिहारी कैसेहुँ नहिं छूटत, बँधी प्रेम की डोरि।
देखि सखी यह गति दुहुनि की, मुदित हँसी मुख मोरि॥
अब जिनि करहु सहाइ सखी री, छाँड़हु सकल सयान।
दुलहिनि छोरि दुलह कौ कंकन, बोलि बबा बृषभानु॥
कमल कमल करि बरनत हैं हो पानि प्रिया के लाल।
अब करि बल साँचे से लागत, रोम कँटीले नाल॥
लीला-रहस गुपाल लाल की, जो रस रसिक बखान।
सदा रहै यह अबिचल जोरी, बलि बलि सूर सुजान[७६]॥

---

७६. सा० १०७३।

कृष्ण का मोर-मुकुट इस समय 'सेहरे'-सा बँधा जान पड़ता है—

गज बर गति आवन मग, धरनि धरत पाउ।
लटकत सिर सेहरौ मनु, सिखि सिखंड भाउ[७७]॥

रुक्मिणी से कृष्ण के विवाह का वर्णन भी इसी प्रकार विस्तार से है। वर अनेक प्रकार के वस्त्राभूषणों से सज्जित है। उसके सिर पर 'सेहरा' है और वह चपल घोड़े पर सवार है। 'बरात' के लोग भी खूब सजे-सजाये हैं। 'संख-भेरि-निसान' आदि बजते हैं। भाट' बिरद बोलते हैं, मुहूर्त सोधकर 'चौरी' रची जाती है। मुक्ताहल से 'चौक' पुराया जाता है।

अब वस्त्राभूषणों से अलंकृत करके वधू को उसकी सखियाँ मंडप में लाती हैं। वेद-विधि से कृष्ण-रुक्मिणी का विवाह होता है। विप्रों को अनगिनती गैयाँ दान में मिलती हैं, याचक दान पाकर 'अजाची' हो जाते हैं। तब वर-वधू मंदिर में जाते हैं। बहन सुभद्रा आरती उतारती हैं। माता देवकी 'वारकर' पानी पीती और असीस देती हैं। युवतियाँ तब दोनों को 'जुआ' खिलाती और अन्य 'कुल-ब्यौहार' कराती हैं—

श्री जादौपति ब्याहन आयौ।
धनि धनि रुकमिनि हरि बर पायौ।
स्याम घन हरि परम सुंदर, तड़ित बसन बिराजई।
अंग भूषन सूर ससि पूरन कला मनु राजई।
कमल मुख कर कमल लोचन कमल मृदु पद सोहई।
कमल नाभि कपोल सुंदर, निरखि सुर मुनि मोहई॥
सुधा सरोवर चिबुक अनूपम।
ग्रीव कपोत नासिका कीर सम।
कीर नासा इन्द्रधनु भ्रू, भँवर-सी अलकावली।
अधर बिद्रुम बज्रकन दाड़िम किधौं दसनावली।
लौरि केसर अति बिराजत तिलक मृगमद कौ दियौ।
कामरूप बिलोकि मोह्यौ, बात पद-अंबुज कियौ॥
बसुद्यौ-नंदन त्रिभुवन - बंदन।
मुकुट तरनि मनि कुंडल स्रवनन।

---

७७. सा० १०७४।

मुकुट कुंडल जटित हीरा लाल सोभा अति बनी।
पन्ना पिरोजा लगे बिच बिच चहूँ दिसि लटकत मनी।
सेहरा सिर मुकुट लटकत कंठ माला राजई।
हाथ पहुँची हीर की नग जटित मुँदरी भ्राजई॥
उर बैजंती सोभा अति बनी।
चरननि नूपुर कटि तट किंकिनी।
किंकिनी कटि चरन नूपुर सब्द सुंदर कूजई।
कोकिला कल हंस बाल रमाल तिनहिं न पूजई।
तुरी ताजी बिना ताजन चपल चपला भीहरी।
जनि जरित जराव पाखरि लगी सब मुक्ता लरी॥
चढ़े जदुनंदन बनक बनाइ कै।
सजि बरात चले जादव चाइ कै।
चले साजि बरात जादौ कोटि छप्पन अति बली।
उग्रसेन बसुदेव हलधर करत मन मन अति रली।
संख भेरि निसान बाजे बजैं बिबिध सुहावने।
भाट बोलैं बिरद बर बचन कहैं मन भावने॥
सुरपति आयौ संग आपुन सची।
सोधि मुहूरत चौरी बिधि रची।
रची चौरी आपु ब्रह्मा जटित खंभ लगाइ कै।
इन्द्र-सुर घरनी सहित बैठे तहाँ सुख पाइ कै।
चौक मुक्ताहल पुरायौ आइ हरि बैठे तहाँ।
निरखि सुर नर सकल मोहे, रहि गए जहँ के तहाँ॥
कुँवरि रुकमिनी कमला औतरी।
ससि सोडष कला सोभातन धरी।
कुँवरि ससि सोडष कला सिंगार करि ल्याईं अली।
बेद बिधि कियौ ब्याह बिधि, बसुदेव मन उपजी रली।
पुहुप बरषहिं हरष सुर गंधर्व किन्नर गावहीं।
सारदा नारद सुजस उच्चार बयति सुनावहीं॥

बिप्रनि गो दीन्हीं बहुत जुगुति करि।
किए अजाची जाचक जन बहुरि।
बहुरि निज मंदिर सिधारे करी सुभद्रा आरती।
देवकी पियौ बारि पानी, दै असीस निहारती।
जुवा जुवति खिलाइ कुल ब्यौहार सकल कराइयौ।
सूर जन मन भयौ आनँद हरषि मंगल गाइयौ[७८] ॥

(ओ) अंत्येष्टि—

राजा दशरथ की अंत्येष्टि का वर्णन सूरदास ने किया है। उनके 'विमान' के साथ गुरु और पुरजन चलते हैं। श्मशान पर पहुँचकर 'चंदन-अगर-सुगंध-घृत' आदि से 'चिता' बनायी जाती है जिस पर राजा का शव रखकर भस्म किया जाता है। इसके बाद 'तिल-अंजलि' दी जाती है। दस दिन तक 'जल-कुंभ' और 'दीप-दान' आदि की क्रिया होती है। ग्यारहवें दिन ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता है और 'नाना बिधि' दान दिया जाता है—

गुरु बसिष्ठ भरतहिं समुझायौ।
राजा कौ परलोक सँवारौ, जुग जुग यह चलि आयौ।
चंदन अगर सुगंध और घृत, बिधि करि चिता बनायौ।
चले बिमान संग गुरु-पुरजन, तापर नृप पौढ़ायौ।
भस्म अंत तिल-अंजलि दीन्हीं, देव बिमान चढ़ायौ।
दिन दस लौं जल कुंभ साजि सुचि, दीप-दान करवायौ।
जानि एकादस बिप्र बुलाए, भोजन बहुत करायौ।
दीन्हौ दान बहुत नाना बिधि, इहिं बिधि कर्म पुजायौ।
सब करतूति कैकई कैं सिर, जिनि यह दुख उपजायौ।
इहिं बिधि सूर अजोध्याबासी, दिन-दिन काल गँवायौ[७९] ॥

अंत्येष्टि करनेवाले पुत्र भरत ने सर भी मुड़ाया है। उनका 'मुंडित-केस-सीस' देखकर राम बहुत दुखी होते हैं—

---

७८. सा० ४१८६। ७९. सा० ६५०।

भ्रात-मुख निरखि राम बिलखाने।
मुंडित केस-सीस, बिहबल दोउ, उमँगि कंठ लपटाने[८०] ॥

सीता-हरण के अवसर पर, उनका विलाप सुनकर, रावण से युद्ध करनेवाला जटायु जब राम के दर्शन करके और सारा प्रसंग सुनाकर मरता है, तब ये अपने हाथ से उसे जलाते हैं—

रघुपति निरखि गीध सिर नायौ।
कहिकै बात सकल सीता की, तन तजि चरन-कमल चित लायौ।
श्री रघुनाथ जानि जन अपनौ, अपनैं कर करि ताहि जरायौ।
सूरदास प्रभु दरस परस करि, ततछन हरि कैं लोक सिधायौ[८१] ॥

इसी प्रकार शबरी के 'हरि-लोक' सिधारने पर भी राम 'तिल-अंजलि' देते हैं—

सबरी-आस्रम रघुबर आए। अरधासन दै प्रभु बैठाए।
खाटे फल तजि मीठे ल्याई। जूँठे भए सो सहज सुहाई।
अंतरजामी अति हित मानि। भोजन कीने, स्वाद बखानि।
जाति न काहू की प्रभु जानत। भक्ति-भाव हरि जुग-जुग मानत।
करि दंडवत भई बलिहारी। पुनि तन तजि हरि-लोक सिधारी।
सूरज प्रभु अति करुना भई। निज कर करि तिल-अंजलि दई[८२]।

---

८०. सा० ६-५२। ८१. सा० ६-६६।
८२. सा० ६-६७।

कला-कौशल

वास्तु, मूर्ति, चित्र, संगीत और काव्य—ये पाँच मुख्य कला-भेद हैं। इनमें से प्रथम तीन के सौंदर्य का अनुभव हमें नेत्रेंद्रिय द्वारा होता है और अंतिम दो का श्रवणेंद्रिय द्वारा। प्रथम वर्ग में से वास्तुकला से संबंधित शब्दावली सूर-काव्य में अधिक है और द्वितीय वर्ग में से संगीत कला की। अन्य कलाओं में से 'पाहन-पूतरी', 'प्रतिमा' आदि में मूर्तिकला का एवं पर्वों-त्योहारों के शुभ अवसरों पर दीवार या मंच पर विशेष रूप से, एवं 'बनमुद्रा घसि कै' अंगों पर सामान्य रूप से, बनाये गये चित्रों में चित्र-कला का अभ्यास माना जा सकता है—

अनोखी मानिनी नई, पाहन-पूतरी भई, बैन न बदति और जगति महाँ तें[83]।

× × ×

सुनि ग्वालनि गाइ बहोरि, बालक बोलि लए।
गुहि गुंजा घसि बन धातु, अंगनि चित्र ठए[84]॥

गीति, छंद, पद आदि काव्यकला के सामान्य अंगों की चर्चा मात्र सूर-काव्य में मिलती है।

नंद जी के यहाँ और अयोध्या, मथुरा तथा द्वारका के राजमहलों में कलापूर्ण भवनों का निर्माण एवं उनके छज्जों, अट्टालिकाओं, झरोखों, कँगूरों आदि पर विद्रुम और स्फटिक की पच्चीकारी का काम, कनक या मणिखंभ, काँच या कनक के सुंदर गच आदि का प्रत्यक्ष संबंध वास्तु-कला से है—

छज्जनि तें छूटैं पिचकारी। रँगि गइ बाखरि, महल अँटारी[85]॥

× × × ×

गोकुल सकल बिचित्र मनि मंडित सोभित झाख झबझालिका[86]॥

---

८३. सा० २७८८। ८४. सा० १०-२४।
८५. सा० २६०२। ८६. सा० ८०६।

संगीत-कला से संबंधित शब्द सूर-काव्य में सबसे अधिक हैं। राग-रागनियों और वाद्यों के जितने नाम उन्होंने गिनाये हैं, उतने संभवतः हिंदी के किसी कवि के काव्य में नहीं मिलेंगे। यों तो सूरदास ने 'छह राग, छत्तीस रागिनी', 'तीन ग्राम इक्कईस मूर्छना, कोटि उनचास तान', 'सरगम' आदि संगीत कला से संबंधित अनेक बातें अपने काव्य में दी हैं, परंतु मुख्य रूप से उन्होंने रागों और बाजों के नाम ही गिनाये हैं जिनमें निम्नलिखित प्रधान हैं—

छहौं राग, छत्तीसौ रागिनि, इक इक नीकैं गावै री।
जैसेहिं मन रीझत है हरि कौ, तैसेहिं भाँति रिझावै री[८७] ॥

× × × ×

मुरलिया बाजत है बहु बान।
तीनि ग्राम, इकईस मूर्छना, कोटि उनचास तान[८८] ॥

× × × ×

नंद - नँदन सुघराई, बाँसुरी बजाई।
सरगम सुनिकैं साधि, सप्त सुरन गाई।
अतीत अनागत संगति, बिच तान मिलाई।
सुर तालऽरु नृत्य ध्याइ, पुनि मृदंग बजाई।
सकल कला गुन प्रबीन, नवल बाल माई।
सूरज प्रभु अरस परस, रीझि सब रिझाई[८९] ॥

(अ) प्रमुख रागों के नाम—

असावरि या आसावरी, अहीरी, ईमन, करनाटी, कान्हरौ, केतकी, केदारौ, गुंडमलार, गुनकली, गौड़ मलहार, गौड़ी, गोरी, जैजैवंती, जैतश्री, टोड़ी, देव या देवगंधार, देवगिरी, देशाक, नट, नटनारायन, नायकी, पंचम, पूर्वी, प्रभाती, बिभास, बिहार या बिहाग, बेलावल या बिलावल, भूपाली, भैरव, मलार, मारू, मालकोस, मालवाई, मेघमालव, रामकली, ललित, श्री, षट, सारंग, सूआ, सोरठी आदि—

असावरि—मालवाई, राग गौरी अरु असावरि राग[९०]।

---

८७. सा० १२३८। ८८. सा० १३५३।
८९. सा० ११५१। ९०. सा० २८३१।

आसावरि—जैतसिरी अरु पूर्वी टोड़ी **आसावरि** सुखरास[९१]।

अहीरी—कान अँगुरिया घालि निकट पुर, मोहन राग **अहीरी** गाइ[९२]।

ईमन—सुर सौंवत भूपाली **ईमन** करत कान्हरो गान[९३]।

करनाटी—**करनाटी** गौरा मैं गाऊँ मुरलि बजाइ रिझाऊँ[९४]।

कान्हरो—सुर सौंवत भूपाली ईमन करत **कान्हरो** गान[९५]।

केतुकी—रामकली गुनकली **केतुकी** सुर सुघराई गाये[९६]।

केदारी—मधुरें सुर गावत **केदारौ**, सुनत स्याम चित लाई[९७]।

गुंडमलार—राग रागिनी मलि गावैं, सुघर **गुंडमलार**[९८]।

गुनकली—रामकली **गुनकली** केतुकी सुर सुघराई गाये[९९]।

गौड़मलार—सारङ्ग **गौड़मलार** सोहिनी (सोहावन-पा०) भैरव ललित बजाया[१]।

गौड़ी—सारंग, **गौड़ी**, नटनारायन, गौरी सुरहि सुनावत[२]।

गौरी—सारंग, गौड़ी, नटनारायन, **गौरी** सुरहि सुनावत[३]।

जैजैवंती—**जैजैवंती** जगतमोहिनी सुर सो बीन बजाये[४]।

जैतसिरी—**जैतसिरी** अरु पूर्वी टोड़ी आसावरि सुखरास[५]।

टोड़ी—सुहो, सारंग, **टोड़ी**, भैरव, सोरठी, केदार[६]।

देव—देवगिरी देसाक **देव** पुनि गौरी श्री सुखरास[७]।

देवगिरी—**देवगिरी** देसाक देव पुनि गौरी श्री सुखरास[८]।

देसाक—देवगिरी **देसाक** देव पुनि गौरी श्री सुखरास[९]।

नट—सारंग **नट** पूरबी मिलिकै, राग अनूपम गाऊँ[१०]।

नटनारायन—सारंग, गौड़ी, **नटनारायन**, गौरी सुरहि सुनावत[११]।

---

९१. सा० १०१६। ९२. सा० ३२१७।
९३. सा० १०१३। ९४. सा० २१४०।
९५. सा० १०१३। ९६. सा० १०१७।
९७. सा० १०-२४२। ९८. सा० २८३१।
९९. सा० १०१७। १. सा० १०१५।
२. सा० १२२०। ३. सा० १२२०।
४. सा० १०१७। ५. सा० १०१६।
६. सा० २८३१। ७. सा० १०१६।
८. सा० १०१६। ९. सा० १०१६।
१०. सा० २१४१। ११. सा० १२२०।

नायकी—ऊँछ अड़ाने के सुर सुनियत निपट **नायकी** लीन[१२]।
पंचम—जानि प्रभात राग **पंचम** षट माल कोस रस भीने[१३]।
पूर्वी—जैतसिरी अरु **पूर्वी** टोड़ी आसावरि सुखरास[१४]।
प्रभाती—जानि प्रभात **प्रभाती** गायो भोर भयो दोऊ जान्यों[१५]।
बिभास—मधुर **बिभास** सुनत बेलावल दंपति अति सुख पायो[१६]।
बिहाग—करत **बिहाग** (बिहार-पा०) मधुर केदारो सकल सुरनि सुख दीन[१७]।
बेलावल—मधुर बिभास सुनत **बेलावल** दंपति अति सुख पायो[१८]।
भूपाली—सुर साँवत **भूपाली** ईमन करत कान्हरो गान[१९]।
भैरव—सुहो, सारँग, टोड़ी, **भैरव**, सोरठा, केदार[२०]।
मारू—समर **मारू** को रट, सहहि त्रिया अधीर[२१]।
मालकोस—जानि प्रभात राग पंचम षट **मालकोस** रस भीने[२२]।
मालवाई—**मालवाई**, राग गौरी अरु असावरि राग[२३]।
मेघ मालव—सुर हिंडोल **मेघ मालव** पुनि सारँग सुर नट जाम[२४]।
रामकली—**रामकली** गुनकली केतुकी सुर सुघराई गाये[२५]।
ललित—ललिता **ललित** बजाय रिझावति मधुर बीन कर लीने[२६]।
श्री—देवगिरी देसाक देव पुनि गौरी **श्री** सुखरास[२७]।
षट—जानि प्रभात राग पंचम **षट** मालकोस रस भीने[२८]।
सारंग—**सारंग**, गौड़ी, नटनारायन, गौरी सुरहि सुनावत[२९]।
सोरठी—सुही, सारंग, टोड़ी, भैरव, **सोरठी**, केदार[३०]।

---

१२. सा० १०१४।
१३. सा० १०१२।
१४. सा० १०१६।
१५. सा० १०१८।
१६. सा० १०१५।
१७. सा० १०१४।
१८. सा० १०१५।
१९. सा० १०१३।
२०. सा० २८३१।
२१. सा० ३७६८।
२२. सा० १०१२।
२३. सा० २८३१।
२४. सा० १०१३।
२५. सा० १०१७।
२६. सा० १०१२।
२७. सा० १०१६।
२८. सा० १०१२।
२९. सा० १२२०।
३०. सा० २८३१।

(आ) प्रमुख बाजों के नाम—

आउज या आउझ, अमृतकुंडली, उपंग, करताल, किन्नरी, गिरगिरी, गोमुख, चंग, झाँझ, झालरी, डफ, डिमडिम, ढोल, तुंबुर, तूर, निसान या नीसान, पखाउज, पटह, बाँसुरी, (= बेनु, मुरलिया, मुरली), बीना, भेरि, महुअरि, मिरदंग या मृदंग, मुरज, रबाब, रुंज, संख, सुरमंडल, हुरका आदि—

आउज—बीना-झाँझ-पखाउज-आउज और राजमी भाग[31]।

आउझ—आउझ बर मुहचंग, नैन सलोने री रँग राँची ग्वालिनि[32]।

अमृतकुंडली—एक पटह इक गोमुख, इक आउझ इक झल्लरि, एक अमृत कुंडली,
इक डफ कर धारे[33]।

उपंग—मुरली मुरज रबाब उपंग। उघटत सब्द बिहारी संग[34]।

करताल—कर करताल बजावहीं, छिरकति सब ब्रजनारि[35]।

किन्नरी—झाँझ झालरी किन्नरी, रँगभीजी ग्वालिनि[36]।

गिरगिरी—(फूले) बजावें गिरगिरी गार, भेरी घहर अपार संतन हित फूल डोल[37]।

गोमुख एक पटह इक गोमुख, इक आउझ, इक झल्लरि, एक अंमृत कुंडली,
इक डफ कर धारे[38]।

चंग—महुवरि बाँसुरि चंग लाल रँग होरी[39]।

झाँझ—बीना-झाँझ-पखाउज-आउज और राजमी भाग[40]।

झालरी—झाँझ झालरी किन्नरी, रँग भीजी ग्वालिनि[41]।

डफ—डफ बाँसुरी सुहावनी, रँगभीजी ग्वालिनि[42]।

डिमडिम—डिमडिम, पटह, ढोल, डफ, बीना, मृदंग चंग अरु तार[43]।

ढोल—डिमडिम, पटह, ढोल, डफ, बीना, मृदंग चंग अरु तार[44]।

---

३१. सा० ६-७५। ३२. सा० २८६७।
३३. सा० २८८८। ३४. सा० ११८०।
३५. सा० २८६४। ३६. सा० २८६७।
३७. सा० २६१७। ३८. सा० २८८८।
३९. सा० २८६६। ४० सा० ६-७५।
४१. सा० २८६७। ४२. सा० २८६७।
४३. सा० २६०६। ४४. सा० २६०६

तुंबुर—इक बीना इक किन्नरि, इक मुरली इक उपंग इक तुंबुर इक रबाब भाँति सौं बजावैं[४५]।

तूर—दसएँ मास मोहन भए (हो), आँगन बाजै तूर[४६]।

निसान—निंदा पर-मुख पूरि रह्यौ जग, यह निसान नित बाजा[४७]।

नीसान—बजे देवलोक नीसान। बरषत सुमन करत सुर गान[४८]।

पखाउज—बीना-झाँझ-पखाउज-आउज और राजसी भोग[४९]।

पटह—एक पटह इक गोमुख, इक आउझ इक झल्लरि, इक अंमृत कुंडली, इक डफ कर धारैं[५०]।

बाँसुरी—डफ बाँसुरी सुहावनी, रँगभीजी ग्वालिनि[५१]।

वेनु—बेनु बजाइ बुलाई नारि। सहि आई कुल सब की गारि[५२]।

मुरलिया—इक पट लीन्हौ छीनि, मुरलिया लई छिड़ाई[५३]।

मुरली—मुरली मुरज रबाब उपंग। उघटत सब्द बिहारी संग[५४]।

बीना—दूरि करहिं बीना कर धरिबौ[५५]।

महुअरि—डफ, बाँसुरी रुंज अरु महुअरि, बाजत ताल मृदंग[५६]।

मृदंग—हरद दूब केसरि मग छिरकहु, भेरी मृदंग निसान बजावहु[५७]।

मुरज—मुरली मुरज रबाब उपंग। उघटत सब्द बिहारी संग[५८]।

रबाब—मुरली मुरज रबाब उपंग। उघटत सब्द बिहारी संग[५९]।

रुंज—डफ, बाँसुरी रुंज अरु महुअरि, बाजत ताल मृदंग[६०]।

संख—संख भेरि निसान बाजे बजैं बिबिध सुहावने[६१]।

सुर मंडल—अमृत-कुंडली औ सुर मंडल, आउझ सरस उपंग[६२]।

हुरके—दाढ़ी औ दाढ़िनि गावैं, ठाढ़े हुरके बजावैं, हरषि असीस देत मस्तक नवाइ कै[६३]।

---

४५. सा० २८८८। ४६. सा० १०-४०।
४७. सा० १-१४४। ४८. सा० ११८०।
४९. सा० ६-७५। ५०. सा० २८८८।
५१. सा० २८६७। ५२. सा० ११८०।
५३. सा० २८८१। ५४. सा० ११८०।
५५. सा० ३३५७। ५६. सा० २८६०।
५७. सा० ४१८५। ५८. सा० ११८०।
५९. सा० ११८०। ६०. सा० २८६०।
६१. सा० ४१८६। ६२. सा० २६१६।
६३. सा० १०-३१।

सूर-काव्य से जो सूचियाँ ऊपर दी गयी हैं, उनसे कवि के समकालीन समाज की सांस्कृतिक स्थिति का बहुत-कुछ परिचय सहज ही मिल जाता है। परंतु इस संबंध में इतना ध्यान रखना भी आवश्यक है कि पौराणिक कथा-वार्ता आदि में समय समय पर सम्मिलित होते रहने से सूरदास ने अनेक वस्तुओं के नाम ऐसे भी दे दिये होंगे जो उनके समय में बहुत लोकप्रिय न होंगी। उदाहरण के लिए जितने आभूषण या बाजे सूरदास ने गिनाये हैं, जन-साधारण उन सभी से परिचित रहा हो, यह बहुत आवश्यक नहीं है। फिर भी इसमें कोई संदेह नहीं कि ब्रज की तत्कालीन सांस्कृतिक स्थिति का ज्ञान कराने में उक्त शब्दावली से पर्याप्त सहायता मिलती है।

[⌣(०)⌣]